जुलाई 2005
Rs. 12 /-
चन्दामामा
इस अंक में
देखिए जी-मैन के
कारनामे
G-man

a UTV venture

उसके भरोसेमंद दोस्त हैं उसके साथ.

JW1 2004 2005

चन्दामामा   सम्पुट - ५६   जुलाई २००५   सञ्चिका - ७

अंतरंग

विशेष आकर्षण

SUBSCRIPTION

For USA and Canada
Single copy $2
Annual subscription $20

Remittances in favour of Chandmama India Ltd.
to
Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal,
Chennai - 600 097
E-mail :
subscription@chandamama.org

शुल्क

सभी देशों में एयर मेल द्वारा बारह अंक ९०० रुपये।
भारत में बुक पोस्ट द्वारा बारह अंक १४४ रुपये।
अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी-ऑर्डर द्वारा 'चंदामामा इंडिया लिमिटेड' के नाम भेजें।

संस्थापक
बी. नागिरेड्डी और चक्रपाणि

बच्चों को यन्त्र-मानव न बनायें

केन्द्र में नई सरकार ने अभी-अभी अपने कार्यकाल का एक वर्ष पूरा किया है। इस अवसर पर एक टी.वी. चैनल ने बच्चों के लिए एक कार्यक्रम आयोजित किया। उनसे एक सरल सवाल पूछा गया: भारत का प्रधानमंत्री कौन है? कोई भी छात्र सही उत्तर नहीं दे सका। एक बच्चे ने उस प्रश्न के उत्तर में राष्ट्रपति का नाम बताया और दूसरे ने कांग्रेस अध्यक्ष का।

विगत २७ मई को राष्ट्र ने, पं.जवाहरलाल नेहरू को उनकी ४१ वीं पुण्यतिथि पर स्मरण किया। कुछ कार्यक्रमों में बच्चों ने अपने 'चाचा' नेहरू को याद किया। क्या वर्तमान प्रधान मंत्री का नाम बच्चों के लिए इतना अपरिचित है? प्रदर्शन के दरम्यान बच्चे सिनेमा के या खेल के मैदान के लोकप्रिय सितारों के नाम बता पाने में समर्थ थे। निस्सन्देह ये हस्तियाँ बच्चों में अधिक लोकप्रिय हैं।

इस विचित्र विरोधाभास के लिए बच्चों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। इसके लिए उत्तरदायी है वर्तमान शिक्षा-प्रणाली। सचमुच जितनी आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक जानने की, बच्चों से अपेक्षा की जाती है। सृजनात्मकता के लिए या सामान्य ज्ञान अर्जित करने अथवा मानव मूल्यों को आत्मसात करने के लिए उनके मन में कोई स्थान नहीं छोड़ा जाता।

अब लम्बे अवकाश के बाद स्कूलों के खुलने का समय है। जो खुल चुके हैं, उन्होंने अवकाश की अवधि में अर्जित बच्चों के अतिरिक्त ज्ञान की परीक्षा लेना आरम्भ कर दिया है। जो विद्यालय खुलनेवाले हैं वे भी यही करेंगे। किसलिए? बच्चों को यन्त्र-मानव में न बदलने दें। उन्हें मानव रहने दें, ताके जब वे बड़े हो जायें तो वे गौरव के साथ राष्ट्र का नेतृत्व कर सकें।

सम्पादक : विश्वम

पाठकों के लिए कहानी प्रतियोगिता (दिसम्बर)

सर्वश्रेष्ठ विजेता प्रविष्टि

''यदि सचमुच भगवान मेरे सामने प्रकट होकर वरदान माँगने के लिए कहें तो मैं तो ढेर सारी दौलत और ऐशोआराम की दुनिया भर की चीजें माँग लूँ और बिना मेहनत किये चैन से एक खुशहाल जिन्दगी बिताऊँ।'' बड़े पोते ने खुश होते हुए झट जवाब दिया।

''हूँ!'' जगमोहन यह उत्तर सुन कर गंभीर हो गया और कुछ सोचने लगा। और फिर थोड़ी देर बाद छोटे पोते की ओर मुड़ कर बोला, ''और तुम मेरे बच्चे! तुम भला क्या माँगोगे?''

छोटा पोता कुछ देर तक मौन रहा। फिर बोला, ''दादा जी! भगवान मुझे मिल जायें तो मैं तो उनसे यही प्रार्थना करूँ कि हे प्रभु, मुझे सही बुद्धि और सही समझ दे, अपने कर्त्तव्य का ज्ञान दे और उसे निभाने की शक्ति और पुरुषार्थ दे। एक सुखी जीवन जीने के लिए मुझे इससे अधिक कुछ और नहीं चाहिये। और हाँ, मेरे मार्गदर्शन के लिए हर पल मेरे साथ रहना, ताके कभी भटक न जाऊँ।''

जगमोहन ने इन दोनों के जवाबों से यह निष्कर्ष निकाला कि बड़ा पोता भाग्यवादी होगा, इसलिए उसे भाग्य का सहारा चाहिये। और छोटा पोता पुरुषार्थी होने के साथ-साथ भगवान के प्रति श्रद्धा भी रखेगा। उसमें सिंह और सपूत की तरह अपना रास्ता स्वयं बनाने की क्षमता है। इसीलिए उसने वृद्ध जगन्नाथ को यह सलाह दी कि समय आने पर बड़े पोते को घर और खेत दे देना और छोटे की चिन्ता न करना।

तरुण शर्मा,

मकान नं-२५, गली नं-१, ब्लॉक-ए, सिन्धु फॉर्म रोड,

मीठा पुर विस्तार, बदरपुर, नई दिल्ली-११००४४.

उत्तम वैद्य

वल्लभापुर का निवासी रमेश पांडे प्रख्यात वैद्य था। सब लोग कहते थे कि उनसे बढ़कर कोई वैद्य है ही नहीं। वह निस्संतान था। उसका विश्वास था कि यह शास्त्र किसी के सिखाने मात्र से कोई सीख नहीं सकता। इसके लिए सीखनेवाले में होनी चाहिये, लगन और इच्छा शक्ति।

एक दिन रमेश पांडे के दूर का रिश्तेदार कमल पांडे अपने दोनों बेटों के साथ चिकित्सा कराने उसके यहाँ आया। शहर में उसकी आभूषणों की दुकान थी। कुछ समय से वह नासूर-विशेष से पीडित था। उसके दोनों बेटे धनुंजय व राघव वैद्य वृत्ति के प्रति आकर्षित हुए।

रमेश पांडे की चिकित्सा से दो ही हफ्तों में कमल पांडे के रोग में सुधार आया। शहर लौटते हुए उसने रमेश पांडे से कहा, "भाई साहब, आप साक्षात् धन्वंतरी हैं। परंतु मैं यह नहीं चाहता कि वैद्य वृत्ति में आपकी यह प्रवीणता आप ही के साथ ख़त्म हो जाए।'' रमेश पांडे ने कहा, ''मैं कर भी क्या सकता हूँ। मैं किसी और को यह शास्त्र तभी सिखा सकता हूँ, जब कि उसमें इसके प्रति लगन हो ।''

''मेरे दोनों बेटों में इस शास्त्र के प्रति रुचि है। आप इन दोनों को अपने शिष्यों के रूप में स्वीकार कीजिये।'' कमल पांडे ने विनती की।

रमेश पांडे ने बता दिया कि उनकी परीक्षा के बाद ही यह निर्णय लूँगा कि उन्हें शिष्य के रूप में स्वीकार करना है या नहीं। उसके इस उत्तर से संतुष्ट कमल पांडे शहर चला गया।

इन दोनों में से धनुंजय अक़्लमंद था। वह विषय जल्दी ही समझ जाता ता। राघव शांत स्वभाव का था। विषय को एक-दो बार सुन ले के बाद ही वह किसी निर्णय पर आता था। रमेश पांडे दस दिनों तक तरह-तरह के पत्तों और जड़ी-बूटियों की विशिष्टता के बारे में उन्हें बताया।

पद्मजा शुक्ला

साथ ही उसने उनसे यह भी कहा कि वे उसकी चिकित्सा-पद्धति को ग़ौर से देखें।

एक दिन, रमेश पांडे को ख़बर मिली कि पास ही के गाँव का भूस्वामी बहुत बीमार है, जो खाता है, वह पचता नहीं और कोई अज्ञात रोग उसे कमज़ोर बनाये जा रहा है। जो आदमी यह ख़बर लेकर आया, उससे रमेश पांडे ने भूस्वामी के बारे में और भी जानकारी ली। रमेश पांडे समझ गया कि वह भूस्वामी अजीर्ण रोग से पीड़ित है। उसने धनुंजय को उस भूस्वामी के इलाज का भार सौंपा। जाते समय उसे यह भी समझाया कि इस अजीर्ण रोग के लिए किन-किन दवाओं को उपयोग में लाना चाहिये।

दो दिनों तक धनुंजय ने गुरु की बतायी दवाओं से भूस्वामी का इलाज किया। उनके कहे पत्तों व जड़ी-बूटियों को पीसा और उनकी गोलियाँ बनाकर भूस्वामी को खिलाने लगा। लगता था कि वह सुधर गया, पर देखते-देखते भूस्वामी फिर से उस रोग से पीडित होने लगा। धनुंजय की समझ में नहीं आया कि क्या किया जाए। वह निराश होकर लौट आया।

राघव ने, गुरु से भूस्वामी की चिकित्सा की अनुमति माँगी। रमेश पांडे ने मान लिया। भूस्वामी के यहाँ पहुँचने के बाद उसने वह आहार मँगवाया, जिसे भूस्वामी हर दिन खाता है। उसने उस आहार की परीक्षा की। उसके भोजन में घी और तेल की भरमार है। अनेक प्रकार के बलवर्धक पदार्थ आवश्यकता से अधिक हैं। राघव की समझ में आ गया, त्रुटि कहाँ है।

राघव ने भूस्वामी से कहा, ''महाशय, आपको परहेज़ से रहना होगा। दस दिनों तक इमली के रस व मथे मट्ठे से भोजन करना होगा। तभी जाकर गुरु की दी हुई दवा उपयोगी साबित होगी।''

भूस्वामी ने ''हाँ'' कह दिया। एक सप्ताह के अंदर ही उसका रोग कम होने लगा। भूस्वामी ने राघव को उचित भेंट देकर विदा किया।

राघव जब लौटा तब रमेश पांडे घर में नहीं था। धनुंजय ने राघव से विषय की पूरी जानकारी ली। शाम को जब रमेश पांडे लौटा तब धनुंजय ने कहा, ''गुरुदेव, मैं जान गया कि राघव ने भूस्वामी की कैसे चिकित्सा की और उसमें सफल हुआ। उसने जीरा, काली मिर्च और थोड़ा सा गुड़ मिश्रित कषाय मात्र दिया। मैंने भी आप का बताया इलाज

ही किया पर कोई फायदा नहीं हुआ। ऐसा क्यों हुआ?''

रमेश पांडे ने मुस्कुराते हुए कहा, ''धनुंजय, वैद्य को चाहिये कि वह रोगी की ही नहीं, बल्कि रोग की भी परीक्षा करे। रोग के मूल कारण को पहचानना चाहिये। भूस्वामी आवश्यकता से अधिक खाता है। इस की चिकित्सा के लिए दवाओं से अधिक प्रभावशाली है, पथ्य। इसी कारण राघव का इलाज कामयाब हुआ।''

दूसरे दिन, जब दोनों जड़ी-बूटियों को इकट्ठा करने वन में घूम रहे थे, तब उन्होंने एक आदमी को पेड़ के नीचे बेहोश पड़ा देखा। वह बहुत ही दुबला-पतला था और उसके कपड़े फटे हुए थे। धनुंजय ने कहा, ''कोई भिखारी लगता है। भूख से बेहोश है। चलो, अपना काम करते हैं।''

''हाँ, हाँ, जिस काम पर आये, वह तो करेंगे ही। परंतु, इस स्थिति में इसे छोड़कर जाना भी तो उचित नहीं है।'' कहते हुए राघव ने उस आदमी के चेहरे पर पानी छिड़का। जब वह आदमी उठ बैठा, तब राघव ने धनुंजय से कहा, ''धनुंजय, इसे घर ले जाकर भर पेट खाना खिलायेंगे। यह भी जानेंगे कि क्या भूख के कारण ही इसकी यह दुस्थिति हुई है या किसी रोग से यह पीड़ित है। गुरुजी से इसकी परीक्षा करायेंगे।'' कहकर वे उसे गुरु के पास ले आये।

रमेश पांडे ने सब कुछ सुनने के बाद धनुंजय से कहा, ''निस्सहाय के प्रति और रोगियों के प्रति वैद्य में सहानुभूति होनी चाहिये। उसकी आर्थिक परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर उससे धन लेना चाहिये। हम रोगी का मित्र बनकर उससे व्यवहार करेंगे तो हम अपनी वृत्ति में निखरेंगे।''

गुरुदेव की बातें सुनकर धनुंजय का चेहरा फीका पड़ गया। उसने कहा, ''क्षमा कीजिये गुरुदेव। वैद्य वृत्ति के द्वारा अधिकाधिक कमाने के उद्देश्य से यहाँ आया था। पर अब लग रहा है कि व्यापार की तुलना में यह कमाई नहीं के बराबर है। वैद्य वृत्ति मेरे स्वभाव के अनुकूल नहीं है। मुझे घर लौटने की अनुमति दीजिये।'' यों कहकर धनुंजय वहाँ से चला गया।

राघव ने गुरु रमेश पांडे के यहाँ रहकर वैद्य वृत्ति अपनायी और थोड़े ही समय में उत्तम वैद्य बना। वह गुरु से भी अधिक प्रसिद्ध हुआ।

लोभ

कुमुद्वती राज्य की सरहदों पर प्रवाहित होनेवाली कुमुदिनी नदी तट पर सुप्रसिद्ध सोमशेखर मुनि का आश्रम हुआ करता था। गुरुकुल को चलानेवाले सोमशेखर मुनि शिष्यों को ध्यान की पद्धतियों के साथ-साथ चित्र लेखन भी सिखाया करते थे। वे चित्रलेखन के सिद्धहस्त कलाकार थे। अतः कलाओं में अभिरुचि रखनेवाले संपन्न लोग सुदूर प्रांतों से वहाँ आया करते थे और उनका माँगा शुल्क चुकाकर अपना चित्र बनवाकर ले जाते थे।

मुनि जिन चित्रों को बनाते थे, उनके लिए रक़म वसूल करने के विषय में बहुत ही सावधानी बरतते थे। इसपरलोगों को आश्चर्यभी होता था। कुछ लोग तो यह कहने में भी संकोच नहीं करते थे कि एक मुनि को इतना धन वसूल करना शोभा नहीं देता।

लोगों की इन टिप्पणियों की वे परवाह नहीं करते थे और उन्होंने चित्रलेखन द्वारा धन वसूल करने में कोई शिथिलता नहीं दिखायी।

एक दिन सजायी गयी सुंदर बग्घी में राजनर्तकी शुभांगी मुनि से मिलने आयी और उनसे अपना चित्र बनवाने की इच्छा प्रकट की।

''अच्छी बात है। क्षणों में तुम्हारा चित्र बनाता हूँ। परंतु इसके लिए तुम्हें ज्यादा रक़म चुकानी होगी।'' मुनि ने कहा।

''कोई बात नहीं। आप जितना माँगेंगे, दूँगी। कहिये, आपको कितना चाहिये?'' राजनर्तकी ने पूछा।

''अपने स्तर के योग्य कितना दे सकोगी, तुम्हीं बताना,'' मुनि ने पूछा।

''क्या सौ अशर्फियाँ पर्याप्त होंगी?'' उसने पूछा।

नर्तकी ने समझा कि यह सुनकर मुनि बेहद खुश होंगे।

जैन कथा के आधार पर

"दो सौ अशर्फियाँ," मुनि ने बिना हिच-किचाये कहा।

मुनि की माँग जानकर नर्तकी अवाक् रह गयी। पर अपने को संभालती हुई उसने कहा, "यह तो बड़ी रक़म है। मुनियों को इतना बड़ा लोभ शोभा नहीं देता।"

"इसमें सौदे की कोई गुंजाइश नहीं। जो रकम मैंने माँगी, उसे पहले ही चुकाना होगा। इसके बाद ही चित्र बनाने का काम शुरू करूँगा। मेरी शर्त तुम्हें स्वीकार नहीं है तो तुम जा सकती हो।" मुनि ने स्पष्ट कह डाला।

मुनि की इन बातों से नर्तकी के स्वाभि मान को धक्का लगा। जिस काम के लिए आयी, उसे पूरा किये बिना लौटना वह क़तई नहीं चाहती थी। उसने दो सौ अशर्फ़ियाँ उनके सामने रखीं और कहा, "लीजिये, नीचे खड़ी हो जाती हूँ, चित्र बनाना।" कहकर वह सामने के पेड़ के नीचे नृत्य भंगिमा में खड़ी हो गयी।

मुनि ने ध्यान से उसे नख से शिख तक देखा और चित्र बनाने में मग्न हो गया। थोड़ी ही देर में उन्होंने वह चित्र उसे दे दिया।

चित्र को देखकर राजनर्तकी ने कहा, "निस्संदेह ही चित्र बहुत अच्छा बना है। पर इसे बनाने के लिए आपने जो रक़म मुझसे वसूल की वह बहुत ज्यादा है। इतनी रक़म जमा करके मरते समय आप क्या अपने साथ ले जायेंगे?" कहती हुई तेजी से बग्घी में बैठकर निकल पड़ी।

चित्र बनाने का मुनि का काम जारी रहा और

वे धन भी कमाते रहे। पर एक दिन, उन्होंने अचानक चित्र बनाने का काम रोक दिया और शिष्यों को ध्यान पद्धतियों को सिखाने में लग गये। जब राजनर्तकी को इसका पता चला तो वह इस परिवर्तन का कारण जानने के लिए आश्रम आयी।

पिछली बार जब वह आश्रम आयी थी तब रास्ता ऊबड-खाबड था, कंकडों और पत्थरों से भरा हुआ था, अस्तव्यस्त था, पर अब रास्ता बिलकुल साफ-सुथरा था। वह वैशाख पौण मी का दिन था।

आश्रम के प्रांगण में एक विशाल मंडप को देखकर उसे आश्चर्य हुआ। मंडप के बीचों-बीच सोमशेखर का प्रधान शिष्य बैठा हुआ था और वह शिष्यों व भक्तों को संबोधित करते हुए भाषण दे रहा था।

"भानु प्रकाशनंद स्वामी की प्रबल इच्छा थी कि एक ध्यान मंदिर का निर्माण करूँ। परंतु उनकी इच्छा की पूर्ति के पहले ही उनका निधन हो गया। परंतु हमारे गुरुवर सोमशेखर स्वामी ने ध्यान मंदिर के निर्माण को अपना लक्ष्य बनाया और इसके लिए उन्होंने अनवरत परिश्रम किया। लोगों ने उन्हें लोभी, स्वार्थी कहा, पर उन्होंने इस लोक निन्दा की परवाह नहीं की। अपने चित्रलेखन के द्वारा धनार्जन किया और अपने गुरु की इच्छा पूरी की। अगली पीढ़ियों के लिए उपकार करके तपस्या करने वे अरण्य चले गये। उनकी कितनी ही प्रशंसा क्यों न करें, वह कम है। उन्हीं के कारण यह साफ-सुथरा मार्ग बना, यह ध्यान मंदिर बना। हम उनके ऋणी हैं।"

इन बातों को सुनते ही राजनर्तकी की आँखों में आँसू उमड़ आये। उसका मन पश्चाताप से भर गया। उसने उस मुनि को लोभी समझ लिया था जो इतने महान आत्मा और परोपकारी थे। उसे अपनी ग़लती महसूस हुई। मन ही मन उसने मुनि से क्षमा माँगी। इसके बाद उसने अपना कंठहार, सोने की चूड़ियाँ निकालीं और ध्यान मंदिर को भेंट के रूप में समर्पित कर दिया। अब उसका मन प्रशांत था; उसके विचार पवित्र थे। वहाँ से वह चल पड़ी।

भल्लूक मांत्रिक

21

(कालीवर्मा ने सुरंग मार्ग में जाकर बैरागियों से मंत्रदण्ड ले लिया, इसके बाद वे सब जितकेतु राजा के उद्यान में पहुँचे। उस समय वहाँ पर राजा जितकेतु और माया मर्कट आ पहुँचे। राजा ने उनसे वहाँ पर आने का कारण पूछा। पर गुरु बैरागी ''मंत्रदण्ड'' और ''श्यामगुप्त'' चिल्लाने लगा। इसके बाद-)

गुरु बैरागी की बातें राजा की समझ में न आईं। उसने क्रोध में आकर पूछा, ''अबे कमबख्त संन्यासी, यह तुम क्या कहते हो? मंत्रदण्ड कहाँ पर है? यह श्यामगुप्त कौन है?''

गुरु बैरागी थोड़ा आश्वस्त होकर बोला, ''महाराज! मैं एक बैरागी हूँ। संन्यासी कहकर मेरा अपमान न कीजिए! बैरागी अलग होता है और संन्यासी अलग। क्या यह फर्क़ भी आप नहीं जानते?''

यह उत्तर सुनकर राजा ख़ीझ उठा। तब माया मर्कट क्रोध से दाँत किटकिटाकर बोला, ''अबे कपट बैरागी, बात मत बढ़ाओ, असली बात कहो। जिसने मेरा मंत्रदण्ड चुराया है, क्या तुमने उसे देखा है?''

गुरु बैरागी ने माया मर्कट की ओर अचरज के साथ देखा, तब वह अपने शिष्यों की ओर मुड़कर बोला, ''अरे मेरे शिष्यों, क्या यही है जो चन्द्रशिला नगर का नया मंत्री बन बैठा है?''

''जी हाँ, गुरुजी! ये ही मर्कटामात्य हैं।'' बैरागी के दोनों शिष्यों ने एक स्वर में जवाब दिया।

राजा ने ज़ोर से तालियाँ बजाईं। इस पर एक सिपाही दौड़ते आ पहुँचा। राजा ने उसे बैरागियों को दिखाते हुए कहा, ''अरे सुनो, तुम इनके साथ थोड़े और सिपाहियों कोलेकर जाओ, हमारे नगर के श्यामगुप्त के साथ मंत्रदण्ड भी लेकर शीघ्र वापस आओ।''

सिपाही बैरागियों को साथ ले वहाँ से निकलने को हुए, तभी क़िले की दीवारों के उस पार से शंखनाद सुनाई दिया। माया मर्कट उछल कर बोला, ''हे राजा! वह शंखनाद करनेवाले महानुभाव मेरे गुरु मिथ्या मिश्र हैं। अब आप समझ लीजिए कि हमारी सारी मुसीबतें दूर हो गईं। वे हमारे शत्रु भल्लूक मांत्रिक के साथ राजा दुर्मुख, कालीवर्मा तथा राक्षस उग्रदण्ड का अंत कर डालेंगे। अब आप कुछ ही क्षणों में चक्रवर्ती राजा बनने जा रहे हैं।'' ये शब्द कहते वह क़िले की दीवार की ओर चल पड़ा।

राजा जितकेतु ने माया मर्कट का कंधा पकड़कर उसे रोका, तब अपना संदेह प्रकट किया, ''सुनो, महामात्य! मेरे सैनिक, सामंत सूर्यभूपति, उन राक्षस उग्रदण्ड और भल्लूक मांत्रिकों से कब तक दुर्ग की रक्षा कर सकते हैं? तुम भी अगर मेरे साथ न रहोगे तो मुझे वक़्त पर सलाह देनेवाला ही कौन है? मुझे ऐसा मालूम होता है कि हमने मंत्री जीवगुप्त का अपमान करके भेज दिया, यह हमारी बड़ी भूल थी।''

''राजन, आपके प्राणों के लिए कोई ख़तरा नहीं है।'' यों समझाकर माया मर्कट दौड़ पड़ा।

इस पर माया मर्कट गरजकर बोला, ''अबे, तुमने जो कुछ देखा है, जल्दी बताओ, वरना इस बार मैं तलवार से तुम्हारा सर काट डालूँगा।''

बड़े शिष्य ने चिंतापूर्ण चेहरा बनाकर सलाह दी, ''गुरुजी! सच्ची बात बता दीजिए। हमें इनाम भी मिल जायेगा। नगर की उत्तरी दिशा के द्वार पर जो धर्मशाला है, उसके सामने स्थित महल के मालिक श्यामगुप्त के यहाँ हमने उस मंत्रदण्ड को देखा है न?''

गुरु बैरागी अपना जवाब देने ही जा रहा था कि माया मर्कट किचकिच करते हँस पड़ा, तब बोला, ''अरे मूर्ख! अब तुम्हारे गुरु के कहने के लिए क्या रहा? तुमने ही सारी बातें बदला दीं। हे राजा! इसी वक़्त श्यामगुप्त के घर सिपाहियों को भेजकर वह मंत्रदण्ड मँगवा लीजिए।''

पौधों की आड़ में छिपेये सारे दृश्य देखनेवाला कालीवर्मा यही एक अच्छा मौक़ा मान कर चलने को हुआ, तभी वहाँ पर सामंत सूर्यभूपति हांफते हुए आ पहुँचा और बोला, ''महाराज! मैं अभी यहाँ से निकल कर अपने निजी क़िले में जा रहा हूँ। मैंने सुना है कि एक राक्षस तथा शंखनाद करते अपने शिष्य के साथ पहुँचा हुआ एक मांत्रिक क़िले की दीवारों को तोडकर भीतर प्रवेश करने की कोशिश कर रहे हैं। क़िले के अन्दर मेरी पत्नी, पुत्री और थोड़े सैनिक मात्र हैं।''

राजा जितकेतु आश्चर्य में आकर बोला, ''यह सब मुझे कोई गड़बड़ मालूम होता है। एक राक्षस और भल्लूक मांत्रिक मेरे दुर्ग पर हमला करने पहले ही आ पहुँचे हैं, पर एक और राक्षस और मांत्रिक! यह क्या बला है?''

राजा जितकेतु की समझ में कुछ न आया, वह चारों ओर नज़र दौड़ा ही रहा था, तभी पौधों की ओट में से कालीवर्मा ने बाहर निकलते हुए कहा, ''महाराज! इस वक़्त मैं आपका दुश्मन नहीं हूँ; आप तलवार न खींचियेगा। मैं यह बात आपसे भी ज़्यादा जानता हूँ कि इस वक़्त आप कैसी असहाय हालत में हैं। शायद आप ने देखा होगा कि आपका मंत्री माया मर्कट क़िले की दीवार फांदकर बाहर भाग गया है।''

राजा जितकेतु पल भर चकित रहा, तब पूछा, ''तुम कालीवर्मा हो न? मैंने इसके पहले तुम्हें ही शिरच्छेद का दण्ड दिया था न?''

यह सवाल सुनकर कालीवर्मा धीरे से हँस पड़ा, तब बोला, ''महाराज! यह तो पुरानी बात है। उस वक़्त आप के मन में यह अहं था कि आप एक राजा हैं। इस वक़्त आप भारी मुसीबतों में फंसकर परेशान हैं।''

इस पर जितकेतु ने सामंत सूर्यभूपति की ओर देख कर पूछा- ''कालीवर्मा! सूर्यभूपति एक और राक्षस और मांत्रिक की बात करते हैं। दो मांत्रिक और दो राक्षस कैसे?''

''महाराज! इन सारी गड़बड़ियों का असली कारण है- दो मांत्रिकों के बीच उत्पन्न शत्रुता और बदला लेने की भावना। वे दोनों ब्रह्मपुत्र नदी के जन्मस्थान के समीप स्थित एक पुराने मंदिर के भल्लूकेश्वर के भक्त हैं। उनमें से एक का नाम भल्लूकपाद है। उसी का शिष्य भल्लूक मांत्रिक यहाँ आया हुआ है। दूसरा मिथ्यामिश्र नामक
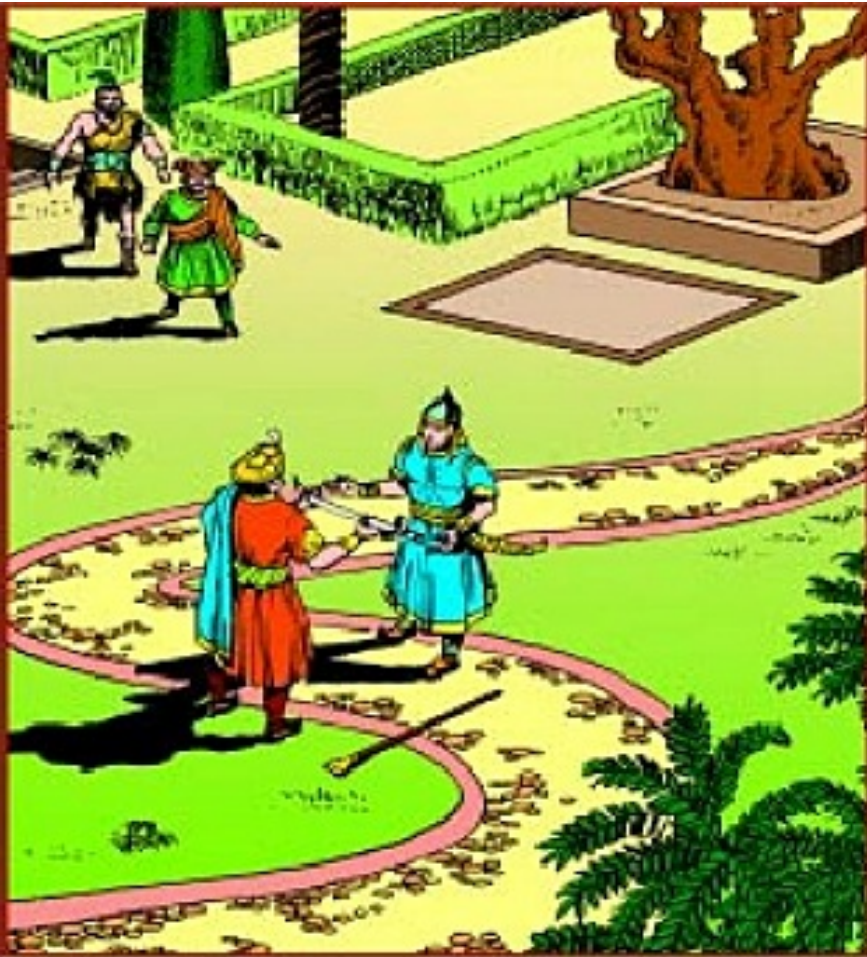
तांत्रिक है। उसी का शिष्य यह माया मर्कट है। अब राक्षसों की बात रही। वे दोनों सगे भाई हैं। उनमें से उग्रदण्ड नामक राक्षस हमारे साथ है। उसके भाई कालदण्ड को तांत्रिक मिथ्या मिश्र ने बन्दी बनाया है।'' कालीवर्मा ने समझाया।

कालीवर्मा की बात पूरी न हो पाई थी कि सामंत सूर्यभूपति बोला, ''महाराज, वही तांत्रिक अपने बन्दी हुए राक्षस को साथ लेकर मेरे क़िले पर हमला करने गया होगा। मुझे आज्ञा दीजिए, मैं पुनः आपके दर्शन करूँगा।'' यों कहकर वह बड़ी तेज़ी के साथ वहाँ से चला गया।

राजा जितकेतु चिंतित हो कालीवर्मा से बोला, ''वर्मा, अब तुम क्या करने जा रहे हो? ओह! तुम्हारे एक हाथ में मंत्रदण्ड भी है और दूसरे हाथ से तुम म्यान से तलवार भी खींच सकते हो? हो सकता है कि मैं राज्य-शासन में कच्चा हूँ, मगर लड़ाइयों में कायर नहीं हूँ। तुम किस चीज़ का मुझ पर प्रयोग करने जा रहे हो?''

कालीवर्मा ने मंत्रदण्ड तथा म्यान से तलवार खींचकर नीचे फेंक दिये, तब बोला, ''महाराज, इनमें से मैं किसी भी चीज़ का आप पर प्रयोग नहीं करने जा रहा हूँ। आपके शासन में जो अत्याचार हुए हैं, उनका दायित्व आप के मंत्रियों को समान रूप से बाँट लेना होगा। फिर भी फिलहाल आपके राज्य को मांत्रिकों तथा राक्षसों से बचाने की जिम्मेदारी मुझ पर भी है।''

ये बातें सुन राजा जितकेतु बड़ा खुश हुआ, नीचे गिरी तलवार को लेकर कालीवर्मा को देने को हुआ, तभी समीप के सुरंग मार्ग से राजा दुर्मुख, और भल्लूक मांत्रिक ऊपर आये।

दुर्मुख गर्जन करके म्यान से तलवार खींचकर बोला, ''कालीवर्मा, हमने सोचा था कि आप की कोई हानि हुई होगी। लेकिन आपने इस राजा जितकेतु को अब तक क्यों जिंदा रहने दिया? मैं अभी इन्हें अपनी तलवार के घाट उतार देता हूँ।'' यों कहते वह जितकेतु की ओर बढ़ा।

कालीवर्मा ने बिजली की गति के साथ दुर्मुख की तलवार को अपनी तलवार से रोककर समझाया, ''राजा दुर्मुख ! जल्दबाजी न कीजिएगा। इन्हीं राजा जितकेतु के वंश की सेवा करते युद्ध में मेरे वीर पिता स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं। उस बात को भूलकर इस वक़्त इनका वध करना मेरे लिए पाप का कारण बन सकता है।''

दुर्मुख क्रोध में आकर कुछ कहने को हुआ, तभी भल्लूक मांत्रिक झट से नीचे गिरे मंत्रदण्ड को लेकर बोला, "कालीवर्मा! तुमने खूब कहा। मेरे गुरु भल्लूकपाद का जानी दुश्मन तांत्रिक मिथ्यामिश्र राक्षस कालदण्ड तथा उसके शिष्य जंबुकेश्वर को साथ लेकर इस प्रदेश में आया है। इसलिए मेरा संदेह है कि वह मेरे गुरु की कोई हानि करके ही इधर आया होगा। हमें तत्काल भल्लूकपाद पर्वतों की ओर चलना होगा।"

"अगर हम उस ओर चले जायें तो यहाँ पर उस तांत्रिक के अत्याचारों को कैसे रोकेंगे? मुझे पता चला है कि वह सामंत सूर्यभूपति के क़िले पर हमला करने चला गया है। उस क़िले में कोई भारी सेना तक नहीं है।" कालीवर्मा ने कहा।

भल्लूक मांत्रिक खीझकर बोला, "ये सारी बातें मैंने सुरंग के मार्ग में प्रवेश करने के पहले ही अपने क़िले की तरफ़ बढ़नेवाले सूर्यभूपति के मुँह से सुन ली हैं। मेरा सीधा सवाल है कि हमें इन राजा और सामंतों के मामलों में क्यों पड़ना है?"

कालीवर्मा क्रोध से मांत्रिक की ओर देखते बोला, "मैं इसी राज्य में पैदा हुआ हूँ और इसी मिट्टी में पला हूँ। सबसे पहले इस राज्य और इसके शासकों का हित देखे बिना कहीं पहाड़ों में रहनेवाले एकाकी मांत्रिकों की मदद करने जाना किसी भी दृष्टि से न्याय संगत न होगा।"

यह उत्तर सुनकर भल्लूक मांत्रिक चकित रह गया और बोला, "मेरे शिष्य कालीवर्मा, तुम कुछ ही क्षणों में कैसे बदल गये? जितकेतु राजा की वे बातें सुनकर धोखा मत खाओ कि ये मंत्रदण्ड लानेवाले को अपना आधा राज्य तथा अपनी दत्तपुत्री देने जा रहे हैं।"

"मेरी इन बातों में आधा राज्य तथा राजकुमारी के साथ विवाह का सवाल उठ ही नहीं सकता। मंत्रदण्ड मैंने महाराजा को नहीं दिया, आप को दिया है न?" ये शब्द कहते कालीवर्मा ने राजा जितकेतु की ओर देखा। तभी वहाँ पर राक्षस उग्रदण्ड और बधिक भल्लूक भी पहुँच गये।

राजा जितकेतु उग्रदण्ड को देख पल भर के लिए भयकंपित हो उठा, फिर हिम्मत बाँधकर बोला, "मेरे तो कोई संतान नहीं है। मैं यही सोच रहा हूँ कि इस राज्य का बारिस किसको बना दूँ? अनायास ही इस समय मुझे अच्छा मौक़ा मिल गया है। सूर्यभूपति की पुत्री मेरी दत्तपुत्री है। मैं

कालीवर्मा के साथ उसका विवाह करूँगा, मेरे बाद चन्द्रशिला का राजा वही होगा।''

इसपर भल्लूक मांत्रिक ज़ोर से चिल्ला उठा, ''भल्लूकपाद गुरु की जय।'' फिर धीरे से बोला, ''आप लोग वास्तविकता को जाने बिना यहाँ पर हवा में क़िले बाँध रहे हैं। वह दुष्ट तांत्रिक मिथ्या मिश्र अब तक सूर्यभूपति की इकलौती कन्या को बन्दी बनाकर अपने निवास पहाड़ी प्रदेश की ओर रवाना हुआ होगा। वह कई दिनों से भल्लूकेश्वरी के वास्ते एक पुजारिनी को प्राप्त करने की कोशिश में लगा हुआ था।''

''मेरे जीवित रहते यह कार्य उस तांत्रिक के लिए संभव न होगा।'' ये शब्द कहते वीर कालीवर्मा ने झट म्यान से तलवार खींच ली।

''कालीवर्मा, मैं भी यही प्रतिज्ञा कर रहहूँ।'' राक्षस उग्रदण्ड ने अपना गदा उठा कर कहा।

भल्लूक तांत्रिक मुस्कुराकर बोला, ''उग्रदण्ड! मैं भी यही चाहता हूँ कि तुम लोगों की प्रतिज्ञाएँ सफल हों! इसी सिलसिले में तुम उस तांत्रिक मिथ्यामिश्र के हाथों से बड़े भाई कालदण्ड को बचा लो । किन्हीं जड़ी बूटियों से उसके दिमाग का म तिभ्रमण करा कर विश्वासपात्र नौकर के रूप में वह उसका उपयोग कर रहा है। अच्छी बात है, अब मैं चला।''
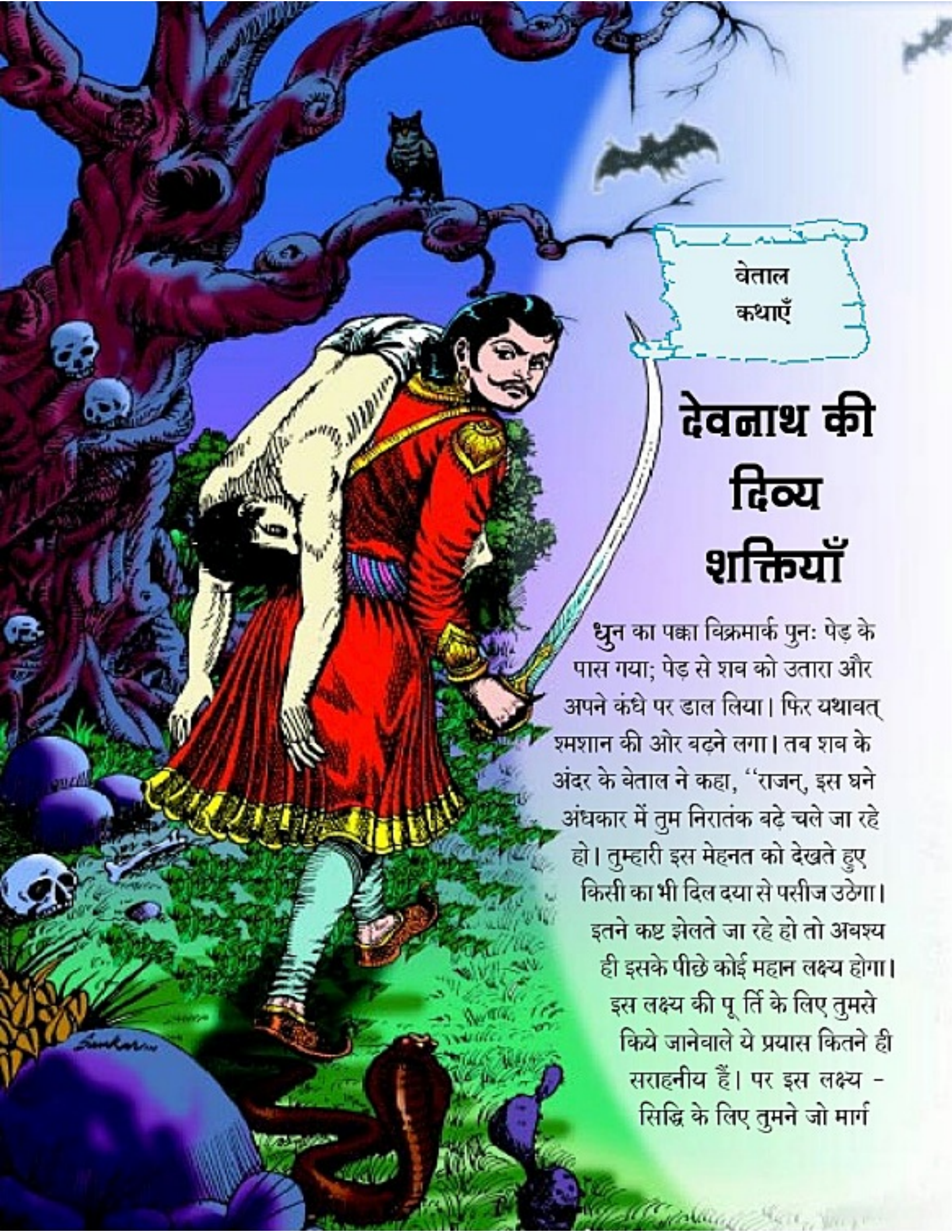
यह कहते भल्लूक मांत्रिक सुरंग मार्ग के समीप पहुँचने ही जा रहा था, तभी एक झाड़ की ओट में से बधिक भल्लूक, ''सिरस भैरव!'' चिल्लाते परशु उठाये उसके आगे कूद पड़ा और बोला, ''मांत्रिक भल्लूक ! आपके मंत्र के प्रभाव से आधा भल्लूक बने नगर के इस बधिक का क्या होगा? तुम तुम्हारे गुरु और मैं- हम तीनों भल्लूक नाम से गड़बड़ी के कारण बन बैठे हैं। मुझे क्या फिर से साधारण मनुष्य के रूप में बदल दोगे या मैं इस परशु से तुम्हारा सर काट डालूँ?''

इस पर भल्लूक मांत्रिक थर-थर कांपते हुए बोला, ''तुम बधिक भल्लूक नहीं हो, इस नगर के प्रधान बधिक हो। तुम अभी जाकर सिरस बन में दण्ड पाये हुए अपराधियों के सर काट डालो!'' इन शब्दों के साथ अपने दण्ड का बधिक भल्लूक के सर पर तीन बार स्पर्श कराया, तब बिजली की गति के साथ सुरंग में उतर गया।

(अगले अंक में समाप्य)

वेताल कथाएँ

युवराज का निर्णय

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया; पेड़ पर से शव को उतारा और यथावत् श्मशान की ओर बढ़ता हुआ जाने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा, ''राजन्, अपने इशारे पर सबको नचा सकते हो। सब पर शासन चला सकते हो। आँखें थोड़ी लाल कीं, तो भय के मारे लोग तुम्हारे क़दमों पर गिरेंगे। परंतु अ ब तुम्हारी दयनीय स्थिति को देखकर तुमपर मुझे दया आती है। सेवक की तरह मुझे ढोये जा रहे हो। आख़िर कब तक ऐसा करते रहोगे? क्यों इतने कष्ट झेल रहे हो? यह मत भूलना कि तुम एक पराक्रमी राजा हो। परंतु तुममें राज-दर्प नाम मात्र भी नहीं है। परंतु कितने ही ऐसे राजा हैं,
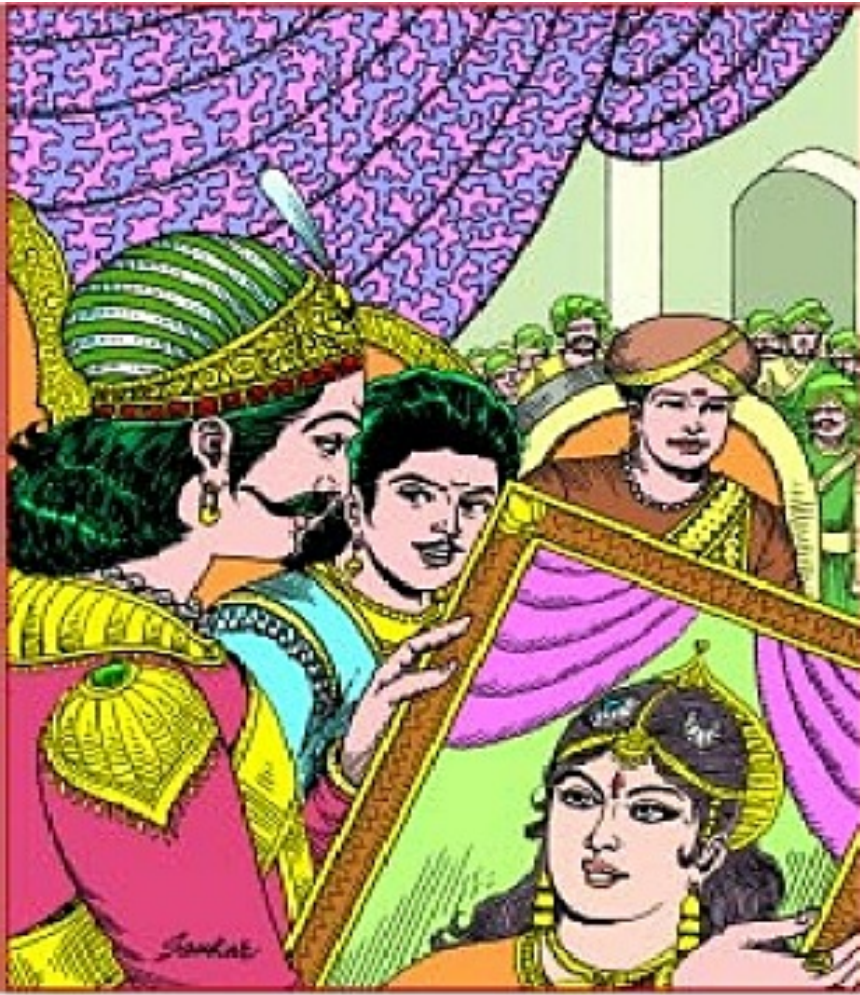
जो मोह में फंसकर, उचित अनुचित को भूलकर उन्मादियों की तरह व्यवहार करते हैं। कहीं तुम भी इसी प्रकार की प्रवृत्ति के तो नहीं हो? तुम्हें सावधान करने के लिए दिनकर वर्मा नामक एक युवराज की कहानी सुनाऊँगा, जो शासक कमल भद्र का इकलौता बेटा था। एक राजकुमारी की सुंदरता पर वह मुग्ध हुआ। अपनी जान को जोखिम में डालकर उसके साथ विवाह करने को सन्नद्ध हो गया। उसकी कहानी मुझसे सुनो।'' फिर वह यों कहने लगा:

संजीवनी राज्य का राजा था कमल भद्र। दिनकर वर्मा उसका इकलौता बेटा था। क्षत्रियोचित युद्ध-विद्याओं के साथ-साथ अन्य शास्त्रों का भी उसने गहरा अध्ययन किया। लोग यह कहते हुए थकते नहीं थे कि ऐसे योग्य युवक को आज तक हमने न ही देखा, न ही सुना। राजा चाहते थे कि उसका राज्याभिषेक कर दूँ और शासन का भार उसे सौंपकर विश्राम लूँ।

एक दिन उषापुरी राज्य से रंजितशर्मा नामक एक दूत राजा के दर्शन करने आया। सिंहासन के बगल में ही शान से बैठे युवराज को देखकर वह बहुत खुश हुआ और उसने महाराज से कहा, ''महाराज, उषापुरी के महाराज अपनी पुत्री मधूलिका का विवाह आपके पुत्र दिनकर वर्मा से करने की अभिलाषा रखते हैं। यही बात आपसे निवेदन करने आया हूँ। हमारी राजकुमारी का चित्र देखिये।'' यह कहते हुए उसने थैली में से चित्र और जन्म-कुंडली निकाल कर महाराज को दी।

चित्र में मधूलिका के अद्भुत सौंदर्य को देखकर महाराज स्तब्ध रह गये। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें, चंपा जैसी नासिका, मुख पर फैली उसकी मंद मुस्कान देखते ही बनती थी। सोने की जीवित प्रतिमा सी लग रही थी। महाराज ने थोड़ी देर तक चित्र को ग़ौर से देखा और उसे अपने पुत्र को दिया। फिर जन्म – कुंडली आस्थान के ज्योतिषी के सुपुर्द किया। बिना पलक मारे एकटक उस चित्र को देखने में मग्न अपने पुत्र को देखकर वे मुस्कुराये।

आस्थान ज्योतिषी ने जन्म-कुंडली को पूरी तरह से देखने के बाद लंबी सांस खींचते हुए कहा, ''क्षमा कीजिए, महाराज। हमारे युवराज मधूलिका से विवाह करेंगे तो विवाह के एक महीने के अंदर

ही सर्प उन्हें डसेगा औरवे अवश्य ही मर जायेंगे।''

यह सुनकर युवराज कुछ क्षणों के लिए स्तब्ध रह गया। पर तुंरत ही अपने को संभालते हुए कहा, ''मृत्यु अनिवार्य हो तो वह किसी भी रूप में आ सकती है। विधाता का लिखा कभी नहीं टल सकता, यह सत्य है। मृत्यु आज नहीं तो कल निश्चित है। लेकिन मृत्यु के भय से और जन्म-कुंडली के कारण ऐसी अद्भुत सुंदरी को हाथ से जाने देना विवेक नहीं कहलाता।''

महाराज भांप गये कि मधूलिका के सौंदर्य ने युवराज को अपने वश में कर लिया है दूत रंजित शर्मा किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। यह कहता हुआ चला गया कि कृपया अपना निर्णय यथाशीघ्र सुनायें।

कुछ दिन गुज़र गये। एक दिन दिनकर बर्मा शिकार करने जंगल गया। मध्याह्न तक शिकार में लगा युबराज थक गया और सरोबर के तट पर सबके साथ भोजन करने बैठ गया। भोजन कर चुकने के बाद पास ही के बरगद के तले विश्राम करने लगा। वह निद्रा की गोद में जाने ही वाला था कि इतने में उस बरगद की टहनी पर आहार की खोज में मग्न बड़ा अजगर अकस्मात् युवराज पर गिर गया और देखते-देखते उसने युवराज के शरीर को लपेट लिया। इस भयंकर दृश्य को देखकर भय के मारे सिपाही हाहाकर करने लगे। उनकी समझ में नहीं आया कि युबराज को अजगर से कैसे बचाया जाए। अगर निशाना लगाकर भाला फेंका जाए या तलवार से बार किया जाए तो

ग़लती से वह युवराज को लग जायेगा। वे कुछ करने का साहस नहीं कर पा रहे थे।

इतने में कहीं से लगातार बाणों की बौछार हुई और उनसे अजगर के टुकड़े-टुकड़े हो गये। अजगर ने युवराज को छोड़ दिया और छटपटाता हुआ मर गया। युवराज बाल-बाल बच गया, इस पर सैनिक हर्ष बिभोर हो गये।

थोड़ी देर बाद एक सुंदर रथ वहाँ पहुँचा। हाथ में बाण लिये बीर नारी की तरह एक सुंदरी रथ से नीचे उतरी। कुछ युवतियाँ भी उसके साथ वहाँ आयीं।

युवराज समझ गया कि उस युवती के कारण ही वह बच गया, उसकी धनुर्विद्या के कौशल ने ही उसे बचाया। उसने कृतज्ञता-भरी दृष्टि से उस सुंदरी को देखा। चित्र में जिस मधूलिका को

उसने देखा था। इस युवती में उसने एक रूपता देखी।

"मैं उषापुरी की युवरानी मधूलिका हूँ। सहेलियों के साथ बिहार करने यहाँ आयी। अचानक आपको सर्प से बचाने का अवसर मिला। क्या मैं जान सकती हूँ कि आप कौन हैं?"

"मैं संजीवनीपुर का युवराज दिनकर वर्मा हूँ। अजगर से मुझे बचाने के लिए हृदयपूर्वक धन्यवाद," युवराज ने मुस्कुराते हुए कहा।

मधूलिका ने तुरंत लजा के मारे सिर झुका लिया। फिर बाद दोनों एक-दूसरे को देखते रहे और अपने-अपने राज्य की ओर निकल गये।

भाग्यवश युवराज सर्प के वार से बच गया, पर आस्थान ज्योतिषी की बात महाराज के कानों में गूंज रही थी कि मधूलिका से बिवाह रचाने से युवराज सर्प से डसे जायेंगे और उनकी मृत्यु तथ्य है। इसकी याद आते ही महाराज चिंतित हो उठे।

एक हफ्ते के बाद, एक दिन युवराज विदूषक के साथ उद्यानवन में टहल रहा था। सूर्यास्त के सौंदर्य का आनंद लेते हुए वह आगे बढ़ा। उस समय अशोक वृक्ष के सूखे पत्तों के बीच में छिपे सर्प की पूंछ पर अनजाने में उसका पांव पड़ गया। सर्प ने फन फैलाते हुए युवराज को डस लिया और तीव्र गति से वहाँ से जाने लगा। युवराज ने तलवार से उसका सिर काट डाला।

विदूषक की चिल्लाहट सुनकर सैनिक भागे-भागे आये। आस्थान वैद्य को जैसे हीख़बर मिली, वह आया और बिष हरनेवाली औषधियाँ देकर उसने युवराज की जान बचायी।

इस घटना ने महाराज को फिर से ज्योतिष की बातें याद दिलायीं। उन्हें यह भय खाये जाने लगा कि अगर मधूलिका से युवराज का विवाह हो जाए तो युवराज अवश्य ही मर जायेंगे।

पंद्रह दिनों के बाद, एक दिन रात को जब युवराज भोजन कर चुकने के बाद सोने की तैयारी कर रहा था, तब परिचारिका पीने के लिए दूध ले आयी और पलंग के बग़ल की एक मेज़ परखकर चली गयी। जब युवराज ने उस गिलास को लेने के लिए हाथ बढ़ाया तो वह गिलास फिसलकर नीचे गिर गया और दूध ज़मीन पर फैल गया। बगल में ही लेटे पालतू बिल्ली ने तुरंत उस दूध को पी लिया और छटपटाता हुआ मर गया। आस्थान

वैद्य ने दूध की परीक्षा की तो मालूम हुआ कि उसमें बहुत ही विषैले सांप का विष मिलाया गया है।

दूध का बरतन जो परिचारिका लेकर आयी थी, उससे पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि वह शत्रुओं का गुप्तचर है और युवराज का अंत करने के लिए हाल ही में नौकरी पर आयी है। वह जेल में बंद कर दी गयी।

इस घटना के घटने के कुछ दिनों के बाद उषापुरी से दूत रंजित शर्मा पुनः आया। उसने महाराज के दर्शन किये और युवराज-मधूलिका के विवाह की बात उठायी।

यह सुनते ही महाराज क्रोधित हो उठे और कहा, ''युवराज-मधूलिका के विवाह का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। जिस दिन आपने उनके विवाह का प्रस्ताव रखा, उस दिन से युवराज तीन बार सर्प के काटने से बाल-बाल बचा। भगवान की कृपा से वह बच गया। इसके बाद भी विवाह कर दिया जाए और जब वह औरत किले में क़दम रखेगी तो क्या होगा, यह मेरी सोच के भी बाहर है। कृपा करके आगे से विवाह का प्रस्ताव मत लाइये।''

बग़ल में बैठे ज्योतिषी ने तुरंत कहा, ''हाँ, प्रभु, आपने ठीक कहा। विवाह के पूर्व ही वधू की जन्म-कुंडली इतनी तीव्र हो तो मधूलिका से युवराज का विवाह संपन्न होने पर युवराज अवश्य ही परलोक सिधारेंगे।'' उसने गंभीर स्वर में कहा।

दूत रंजित शर्मा ने दीर्घ श्वास लिया और
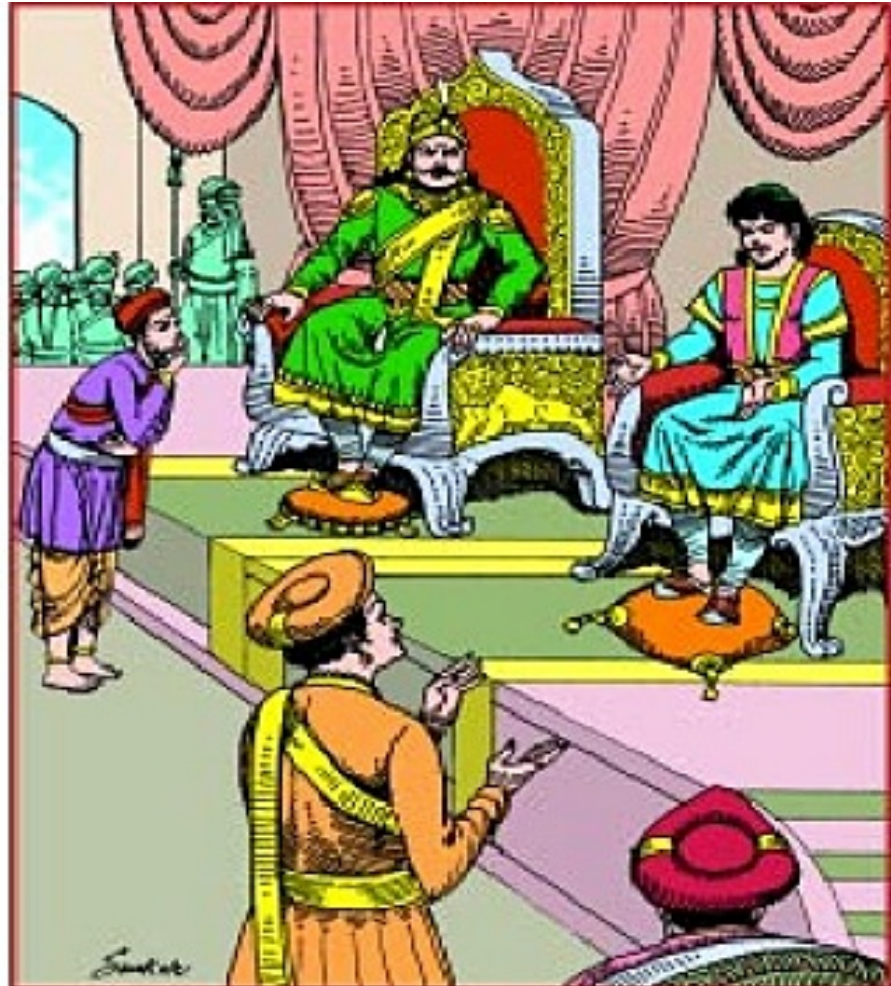
युवराज की तरफ़ यह जानने के लिए देखा कि क्या उसका भी यही अभिप्राय है।

युवराज सोच में पड़ गया। थोड़ी देर बाद सिर हिलाते हुए कहा, ''मैंने मधूलिका से विवाह रचाने का निर्णय ले लिया है।'' उसके स्वर में दृढ़ता थी।

कहानी सुनाने के बाद वेताल ने कहा, ''राजन्, युवराज दिनकर वर्मा तीन बार सर्प के घात से बच गया, फिर भी ज्योतिषी पर उसका विश्वास नहीं रहा। इसका क्या कारण है? अनुभवी पिता व सुविज्ञ ज्योतिषी ने विवाह करने से मना किया, पर मधूलिका से विवाह करने पर वह डटा रहा। राजकुमारी के सौन्दर्य के प्रति उसका यह मोह नहीं तो क्या है? उन्माद के सिवा यह क्या हो सकता है? मेरे संदेहों के समाधान

जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।''

विक्रमार्क ने कहा, ''युवराज, मधूलिका का चित्र देखते ही उसकी सुंदरता पर मुग्ध हो गया। जब प्रत्यक्ष देखा तो उसने उससे प्रेम किया। उसे मालूम है कि ईर्ष्यालु शत्रु किसी न किसी प्रकार से उसका अंत करने पर तुले हुए हैं और वे मौक़े की ताक़ में हैं। इसी कारण जब ज्योतिषी ने सर्प से डसे जाने की बात कही, तब वह भयभीत नहीं हुआ। इसका यह मतलब नहीं कि उसने ज्योतिषी का अपमान किया। वास्तविकता को जानकर व्यवहार करना ही सदा समुचित है। चूँकि भविष्य में जाकर वह राजा बननेवाला है, इसीलिए उसने उस समय यह उचित नहीं समझा कि बड़ों की बातों का विरोध किया जाए, उनके प्रति अनादर दिखाया जाए। इसीलिए उसने पहले ज्योतिषी की बातों का विरोध नहीं किया, कोई जल्दबाजी नहीं दिखायी। ज्योतिषी ने पहले कहा था कि मधूलिका से विवाह होने के एक महीने के पश्चात युवराज को सर्प डसेगा। किन्तु विवाह में पूर्व ही सर्प से तीन बार उसे ख़तरे का सामना करना पड़ा। इससे उसने समझ लिया कि यह उसके शत्रुओं का षड्यन्त्र हो सकता है, कुण्डली का प्रभाव नहीं। क्योंकि कुण्डली का प्रभाव तो विवाह के पश्चात ही देखा जाना चाहिये। लेकिन ज्योतिषी ने उन्हें भी मधूलिका की जन्म-कुंडली का प्रभाव बताया। उसने अपनी बात को सच साबित करने के लिए यह निरर्थक प्रयत्न किया। युवराज तो हर बात को तर्क की कसौटी पर कसता था और निर्णय लेता था। इसीलिए उसे ज्योतिषी की भविष्यवाणी व्यर्थ और झूठी लगी। युवराज जान गया कि जिस युवती ने उसे अजगर से बचाया भला वह जन्म-कुंडली के अनुसार उसके प्राण क्यों लेगी? उसे यह बात निराधार लगी। दिनकर वर्मा के निर्णय में हेतुबद्ध सोच थी, धैर्य था और परिपक्वता थी। इसमें मोह या उन्माद के लिए कोई जगह ही नहीं है।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित गायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

(-राघव की रचना के आधार पर)

गुफा-मन्दिर

एलोरा और अजन्ता का नाम लेते ही गुफा-मन्दिर के भीतर भित्ति चित्रों की ओर ध्यान चला जाता है। क्या तुमने कभी यह कल्पना की कि ये मन्दिर सख्त चट्टान को खोद कर बनाये गये हैं?

तुममें से अधिकांश समुद्र तट पर गये होंगे और कुछ देर तक पानी में खेल चुकने के बाद रेत पर महल और घर बनाये होंगे। पहले तुम रेत का एक ढेर बनाते हो, फिर द्वार, कक्ष तथा अन्य ज़रूरतों को उत्कीर्ण करते हो। ठीक वैसे ही चट्टानों को काटा जाता है और गुफाएँ तथा मन्दिर भी बनाने के लिए उत्कीर्ण किया जाता है, जहाँ ईंट के ऊपर ईंट रखने की प्रणाली नहीं होती। भारत में, शिला-कर्तन लगभग २००० वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ।

सबसे पहले, पर्वत के पार्श्व में एक रूपरेखा खींची गई तथा बाद में अन्तरंग के निर्माण के लिए चट्टान का बड़ा हिस्सा हटाया गया। छत से नीचे की ओर काम किया जाता है। मुम्बई के निकट कार्ले का गुफा-मन्दिर १,९०० वर्ष पूर्व खोद कर बनाया गया। यह दोनों तरफ सीधी रेखा में बने स्तम्भों के लिए प्रसिद्ध है।

इस पर कार्य करनेवाले शैल-कर्तक अवश्य ही पूर्णतावादी रहे होंगे। ऐसा लगता है कि एलोरा में कैलास मन्दिर की सृष्टि करनेवाला वास्तुकार विश्वास नहीं कर सका कि उसी ने इस आश्चर्यजनक कृति का सृजन किया है।

राजस्थान की एक लोक कथा

गधा हमेशा गधा ही रहता है

जीवनसिंह एक धनी व्यापारी था। वह अक्सर निकट के शहर से अपनी दुकान के लिए सौदा लाने जाया करता था। वह अपने साथ अपने गधे को भी ले जाता था। एक दिन वह अपने गधे के साथ शहर से वापस लौट रहा था। वह शहर में बहुत देर तक घूमता रहा, इसलिए वह थक गया था। अतः एक छायेदार पेड़ के नीचे वह विश्राम करने लगा और शीघ्र ही उसे नींद आ गई।

अचानक कुछ छोटे बच्चों के ऊँचे स्वर में मन्त्रोच्चारण से उसकी नींद टूट गई। एक मुल्ला अपने घर पर कुछ बच्चों को पढ़ा रहा था। उसने मुल्ला को चिल्लाकर यह कहते सुना, ''तुम पर चीखने-चिल्लाने का कोई लाभ नहीं। तुम सब गधे हो। मैं तुम्हें इनसान बनाने की कोशिश कर रहा हूँ। लेकिन लगता है तुमने मेरी बात को न समझने के लिए कसम खा ली है।''

जीवनसिंह ने देखा कि बच्चे चुपचाप बाहर निकल रहे हैं।उसे अपने बचपन की याद आ गई जब उसने किसी स्कूल का मुँह नहीं देखा। उसका स्कूल उसके पिता की द ुकान थी, वहीं उसने लिखना, पढ़ना, बोलना और हिसाब-किताब की जटिलता सीखी थी। इससे भी अधिक उपयोगी उसके पिता ने यह सिखाया था कि ग्राहकों के साथ कैसा बरताव करना चाहिये। उसने जीवन में पहली बार सोचा कि यहाँ एक ऐसा आदमी है जो गधों को इनसान बनाने की कोशिश कर रहा है। और उसके पास एक गधा है जो भार ढोने के अलावा और किसी लायक नहीं है। शायद उस काम के लिए गधे को बुद्धि की ज़रूरत नहीं होती।

मुल्ला को बड़ी हँसी आई जब जीवनसिंह ने पेड़ के नीचे सोते हुए जो कुछ सुना, उसे बताते हुए मुल्ला से अपने गधे को इनसान बनाने के लिए अनुरोध किया। मुल्ला ने देखा कि व्यापारी बड़ी

सच्चाई से कह रहा है। ''ठीक है'', उसने कहा, ''गधे को यहाँ छोड़ जाओ और तीन महीनों तक उसे खिलाने के लिए काफी धन दे जाओ। उसके बाद उसे तुम ले जा सकते हो।''

जीवनसिंह ने बचा हुआ धन उसे दे दिया, गधे पर से सामान उतारा और अपनी पीठ पर लाद लिया और उसे धन्यवाद देकर वह घर की ओर चल पड़ा। चालाक मुल्ला गधे को तब तक अपने उपयोग के लिए रखना चाहता था जब तक व्यापारी उसे लेने के लिए न आ जाये। आखिर खिलाने के लिए उसे कौन-सा अपना धन खर्च करना था।

तीन महीनों के बाद जीवनसिंह ठीक समय पर यह आशा लिये आ गया कि एक मज़बूत नवयुवक उसे उसका इन्तज़ार करता हुआ मिलेगा। मुल्ला ने मुस्कुराते हुए उसका स्वागत किया, ''तुम्हारा गधा मेरी अपेक्षाओं से कहीं आगे निकला। क़ुरान की सतरें याद करते समय धीरे-धीरे वह एक ख़ूबसूरत नौजवान में बदल गया। अगले गाँव का मुखिया मर गया था और गाँव वाले उसके स्थान पर रखने के लिए किसी व्यक्ति की तलाश कर रहे थे। वे लोग मुझसे मेरी सलाह मांगने आये। मैंने गधे से आदमी बने युवक की सिफारिश की। गाँव के वयोवृद्ध मेरे एहसानमन्द हो गये। वे युवक को ले गये।''

जीवनसिंह बहुत प्रसन्न हो गया। फिर भी, वह अचानक अपने गधे की कमी महसूस करने लगा। उसने अनुभव किया कि ऐसे बुद्धिमान नवयुवक की सेवा उसे ही मिल पाती तो उसे

कितनी खुशी होती! उसने फिर पड़ोसी गाँव में जाकर उससे मिलने का निश्चय किया। वह सीधे मुखिया के घर पर पहुँचा।

मुखिया उस समय वरिष्ठ लोगों से विचार-विमर्श कर रहा था। जीवनसिंह ने देखा कि मुखिया वैसा सुन्दर और युवा नहीं है जैसा कि मुल्ला ने कहा था। लेकिन जिस तरह उसने गाँव की समस्याओं को सुलझाया उससे वह निश्चित रूप से बुद्धिमान लगा। जब विचार-विमर्श ख़त्म हो गया, जीवनसिंह ने पास जाकर अभिवादन किया। ''अरे यार, क्या तुमने मुझे पहचाना नहीं? मैं तुम्हारा मालिक हूँ। मैंने तुम्हें तालीम याफ्ता मुल्ला के पास छोड़ दिया था।''

व्यापारी अब फकीर की तलाश करने निकला। वह दिन भर गलियों, हाटों, मस्जिदों, दरगाहों पर भटकता रहा, लेकिन फकीर कहीं नहीं मिला। शाम हो रही थी। आखिर वह थकामांदा पानी पीने के लिए- नदी किनारे पहुँचा। वहाँ उसने एक फकीर को देखा। वह नदी किनारे प्रार्थना कर रहा था। प्रार्थना खत्म होने के बाद जीवनसिंह उससे मिला। ''क्या तुम्हें याद है कि पड़ोसी गाँव के मुल्ला ने तुम्हें कुरान की आयतें सिखाई थीं और फकीर में बदल दिया था। इससे पूर्व तुम मेरे गधे थे और मैं तुम्हारा मालिक था।''

मुखिया ने, सौभाग्यवश, इस अनजान आदमी के व्यवहार का बुरा न माना। बल्कि शिष्टतापूर्वक कहा, ''महोदय, मैं इस गाँव का मुखिया हूँ। मैं नहीं समझता तुम क्या कह रहे हो और कैसे तुम मेरे मालिक थे।'' उसने देखा कि गाँव के सभी वयोवृद्ध जन एक दूसरे को और उत्सुकता से आगन्तुक को कैसे देख रहे हैं।

जीवनसिंह ने तब तीन महीने पहले मुल्ला के साथ हुई भेंट के बारे में उसे बताया। यह सुनकर मुखिया ठठाकर हँसा कि कभी वह व्यापारी का गधा था। उसने बुरा न माना, बल्कि उस सीधे सादे आदमी के लिए इस मज़ाक को और आगे बढ़ा दिया। ''मेरे अच्छे दोस्त'', उसने जीवनसिंह के हाथ को अपने हाथ में लेते हुए कहा, ''मुल्ला को समझने में गलती हो गई। वास्तव में तुम्हारा गधा फकीर हो गया है जो अनेक धर्मों का मुखिया है। तुम उसी से जाकर मिलो।''

''क्या मैं गधा था? मैं क्या सुन रहा हूँ! मैं किसी मुल्ला को नहीं जानता। मैंने कुरान की आयतें मदरसा में सीखीं। जो भी हो, तुम्हारा दिमाग तो ठी क है न?'' फकीर ने चिल्ला कर पूछा। ''मैं समझता हूँ कि तुम्हें मतिभ्रम का रोग हो गया है। मेरे पास जादू की कुछ शक्तियाँ हैं जिनसे मैं तुम्हें ठीक कर सकता हूँ, लेकिन इससे पहले तुम्हें अपने गधे के बारे में सब कुछ बताना होगा!''

जीवनसिंह, जिसे डर था कि फकीर अब मार बैठेगा, यह देख कर शान्त खड़ा था कि फकीर नरम पड़ गया है। इसलिए उसने विस्तारपूर्वक सब कुछ बता दिया, जिससे जादू का प्रभाव ठीक ठीक पड़ सके। उसे आशा के विपरीत आशा होने लगी कि फकीर का जादू अन्त में उसी को

गधे में बदल देगा और अपने पहले मालिक को पहचान लेगा।

फकीर आँखें बन्द कर तब तक बैठ चुका था। जीवनसिंह भी साँस रोक कर उसके सामने बैठ गया। फकीर ने धीरे-धीरे आँखें खोलीं और कहा, ''मेरे अच्छे दोस्त, जब कोई बहादुरी का काम करता है, तब हम उसे शेर कहते हैं । जब कोई चालाकी करता है तब हम उसे दुष्ट कहते हैं। हम उसे लोमड़ी भी कह सकते हैं। हम जब अपनी भावनाओं को इस तरह प्रकट क्ते हैं तब लोग बेहतर समझते हैं। वैसे ही जब मुल्ला ने देखा कि बच्चे उसकी तालीम को देर से समझते हैं, तब उसने उन्हें गधा कहना ज्यादा पसन्द किया, यद्यपि वह अपने दिल में यही ख्वाहिश करता रहा कि कैसे वह इन छोटे 'गधों' को बुद्धिमान मनुष्य बना दे। कहने के ढंग में मुल्ला की गलती नहीं है और न तुम्हारी गलती है कि क्यों तुमने मुल्ला से अपने गधे को इनसान में बदलने की उम्मीद की। लेकिन जब तुम मुल्ला के पास अपने गधे को लेकर गये, तब उसने तुम्हारी बेवकूफी से फायदा उठाया। याद रखो, गधा हमेशा गधा ही रहता है। गधे को इनसान नहीं बना सकते। लेकिन तुम जैसे इनसान को गधा ज़रूर बनाया जा सकता है जो मुल्ला ने कर दिखाया। मुल्ला के पास वापस जाओ और तुम्हें उसके घर के पिछवाड़े में तुम्हारा गधा बँधा हुआ मिल जायेगा! मेरी दुआ तेरे साथ है।''

''धन्यवाद, हे परम आदरणीय महाराज!'' जीवनसिंह ने खड़ा होते हुए कहा। ''आज मैंने जीवन में पहला पाठ सीखा है। मैं सीधा मुल्ला के पास जाकर अपना गधा माँगूंगा। मैं अपने गधे को कभी अलग नहीं कर सकता भले ही वह बेदिमाग हो।''

जैसा कि फकीर ने अनुमान लगाया था, गधा मुल्ला के घर के पिछवाड़े में मिल गया। मुल्ला वहाँ पर नहीं था, इसलिए जीवनसिंह अपने गधे को साथ ले कर वहाँ से अपने घर की ओर चल पड़ा। व्यापारी उस दिन गधे पर सवार नहीं हुआ, जैसा कि हमेशा किया करता था, यद्यपि उसके पास उस दिन कोई बोझ नहीं था।

दो 'लम्बी' कहानियाँ

जब कि कुछ नाटे लोग लम्बा बनने के लिए किसी भी हद तक अपनी ऊँचाई बढ़ाना चाहते हैं, यहाँ आन्ध्र प्रदेश के करीम नगर जिले में रामागुण्डम का २९ वर्षीय गट्टैया अपनी लम्बाई से परेशान है। वह ७ फुट ६ इंच ऊँचा है। राजा नरसु और नरसम्मा के छः बच्चों में से एक, गट्टैया ११ वर्ष की उम्र तक एक सामान्य बालक था। उसे एक बार तेज बुखार का दौरा आया। बुखार नियन्त्रित कर लिया गया, लेकिन अगले ८ वर्षों में वह लम्बा होता गया। डाक्टरों को डर था कि यदि उसकी ऊँचाई पर रोक नहीं लगाई गई तो वह दिमाग के लिए हानिकारक हो सकती है। सन् १९९६ में उसका ऑपरेशन किया गया और उसके बाद उसकी लम्बाई में वृद्धि रुक गई। कुछ स्कूलों ने उसे इसलिए अपने यहाँ दाखिला दे दिया ताके वह उनके वॉलीबॉल और बास्केटबॉल टीम से खेल सके। लेकिन क्लास रूम में उसके कारण पढ़ाई में बाधा होती थी। बाद में उसने नौकरियों के लिए प्रयास किया, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। उसे लैम्पपोस्ट पर बल्ब या लैम्प लगाने के लिए या ऊँचे भवनों की पुताई के लिए बुलाया जाता था।

जर्मनी के ३८ वर्षीय हेरल्ड इंग्लिग की कहानी कुछ अलग है जिसे ७ फुट १ इंच की अपनी ऊँचाई के कारणकोई समस्या का सामना नहीं करना पड़ा। वह केरल में कालीकट की शेरीन से शादी करके बहुत प्रसन्न है और इनके तीन बच्चे हैं। शेरीन मुम्बई की एक टेक्टाइल कम्पनी में फैशन डिज़ाइनर का काम करती थी जहाँ हेरल्ड से उसकी पहली बार भेंट हुई। हेरल्ड भी टेक्ट्राइल के व्यापार में काम करता था।

उनके परिवारों की ओर से बहुत बिरोध के बावजूद सन् १९९३ में चेन्नई में वे परिणय-सूत्र में बँध गये। हेरल्ड अभी एक इलेक्ट्रॉनिक कम्पनी का प्रधान है। हाल में वह व्यापार के सिलसिले में केरल में था, जहाँ उन्हें देखने के लिए भारी भीड़ लग जाती थी। हेरल्ड का कहना है कि वह अपनी लम्बाई भूलकर किसी के साथ भी डांस पार्टनर बन सकता है।

THE ADVENTURES OF G-man

एंड्रोमैनिया

कहानी: नेदरवर्ल्ड भाग2

प्रस्तुतकर्ता

POWER SUPPLY

समांतर दुनिया* में जी-मैन उस दुनिया के जी-मैन को ढूंढ़ना शुरू करता है।
उसका उद्देश्य है उसे अपनी दुनिया में लाना ताकि वो टैरोलीन का मुकाबला कर सके।
मैं जानता हूं कैसे...
अपनी टेलीपैथी पावर का इस्तेमाल करता हूं।
यदि वो ज़िंदा होगा तो मेरा जवाब ज़रूर देगा।
जी-मैन अपनी पूरी ताक़त से उसे ढूंढ़ने में जुट जाता है।
कई घंटों के बाद।
एक दिन सुबह-सुबह।
बचाओ!!!
उसकी मेहनत रंग लाई।
HELP ME !!!
एक दर्दभरी आवाज़ आती है।
*ऐसी मान्यता है कि दूर कहीं हमारी दुनिया की ही तरह एक अलग दुनिया होती है।

कुछ घंटों के आराम के बाद जी-मैन उनसे बिदा लेता है और उस आवाज़ की दिशा में चल पड़ता है।

अपनी पहचान छुपाने के लिए वो उनकी तरह कपड़े पहन लेता है।

उसकी टेलीपैथिक शक्ति उसे ले जाती है घिनौनी गलियों में।

TWAAAK

DHISHOOM

पर शहर के मेन दरवाज़े का सुरक्षा घेरा थोड़ी टेढ़ी खीर थी...

और उससे भी बड़ी समस्या थी
टैरोलीन के हेडक्वार्टर में क़दम रखना।

पर जी-मैन में एक ख़ूबी थी...

लोगों को आश्चर्यचकित कर देने की।

HUH !!!

जी-फ़ोर्स का इस्तेमाल करके उसने सबको ज़मीन सुंघा दी।
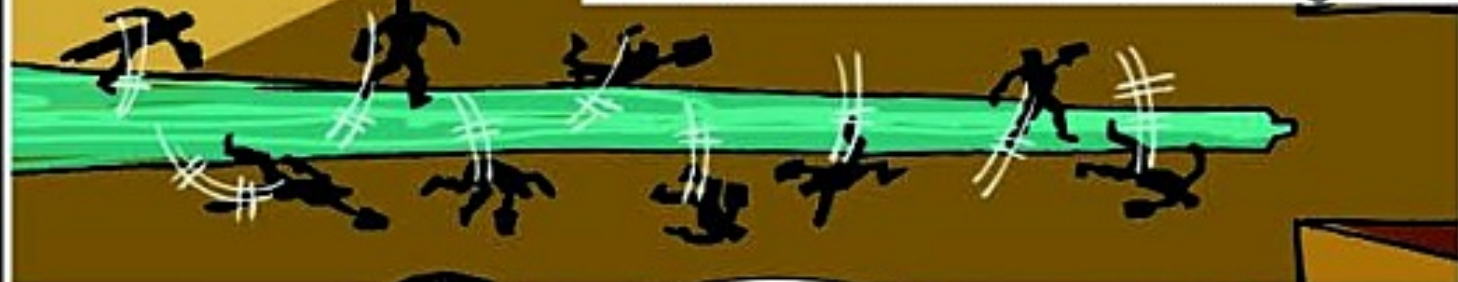
क्यों, मुझे देख आंखों की पलकें चिपक गईं क्या?

जी-मैन?!!

माफ़ करना! बातचीत के लिए फ़ालतू टाइम नहीं है। चलो, थोड़ा आराम करो।

SWOOSH
जी-मैन अभी भी उसी टेलीपैथिक आवाज़ का पीछा कर रहा था...
पीछा करते-करते वो टावर की गहराई
में बने एक चेम्बर में पहुंचता है।
मेरा अंदाज़ा सही
निकला। जी मैन को यहीं कहीं
ऐसी जगह पर कैद किया
गया है जहां फ़रिश्ते
भी नहीं पहुंच सकते।
HELPP MEEE!!!
G-man के लिए पावर सप्लाय
Parle-G
Visit: www.parleproducts.com

वो रहा या फिर
मुझे कहना चाहिए
वो रहा मैं.

KABOOM

तकलीफ़ मत उठाओ.
मैं अपना रास्ता ख़ुद
बना लूंगा.

...तो ये थी मेरी कहानी। हम दोनों में तय रहा। जैसे ही तुम ठीक हो जाओगे तुम मेरी दुनिया में मेरी मदद करोगे और बदले में मैं यहां तुम लोगों की समस्याएं सुलझाऊंगा।
जी-मैन, पहले ही मेरी ज़िंदगी तुम्हारे नाम हो गई है। तुम्हारी मदद को मैं हमेशा याद रखूंगा... तुम्हारी ज़बान मेरी ज़बान रहेगी... हां... ये वादा रहा।
आगे जारी...
G-man के लिए पावर सप्लाय
Parle-G
Visit: www.parleproducts.com

PARLE

CROSSWORD
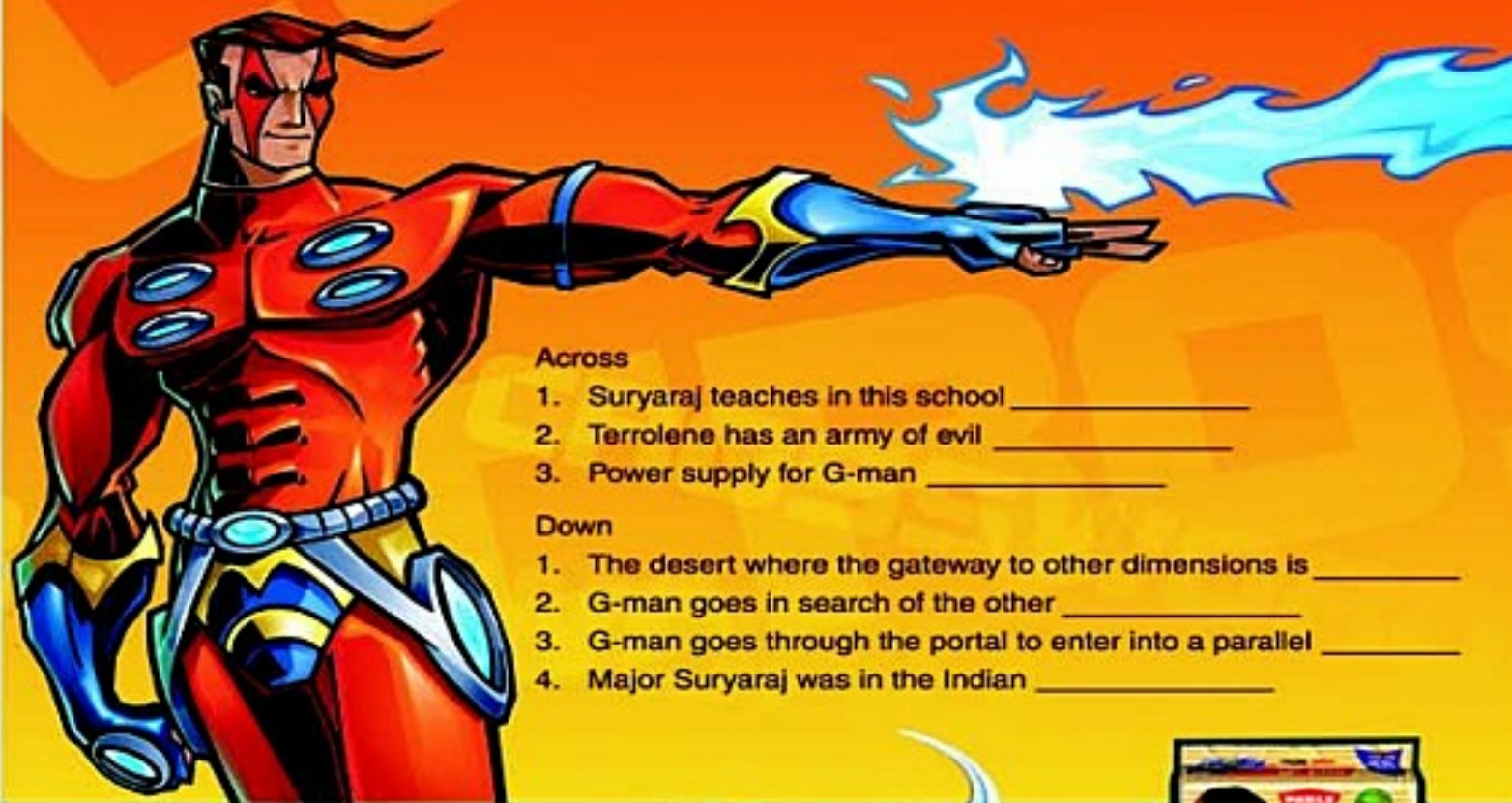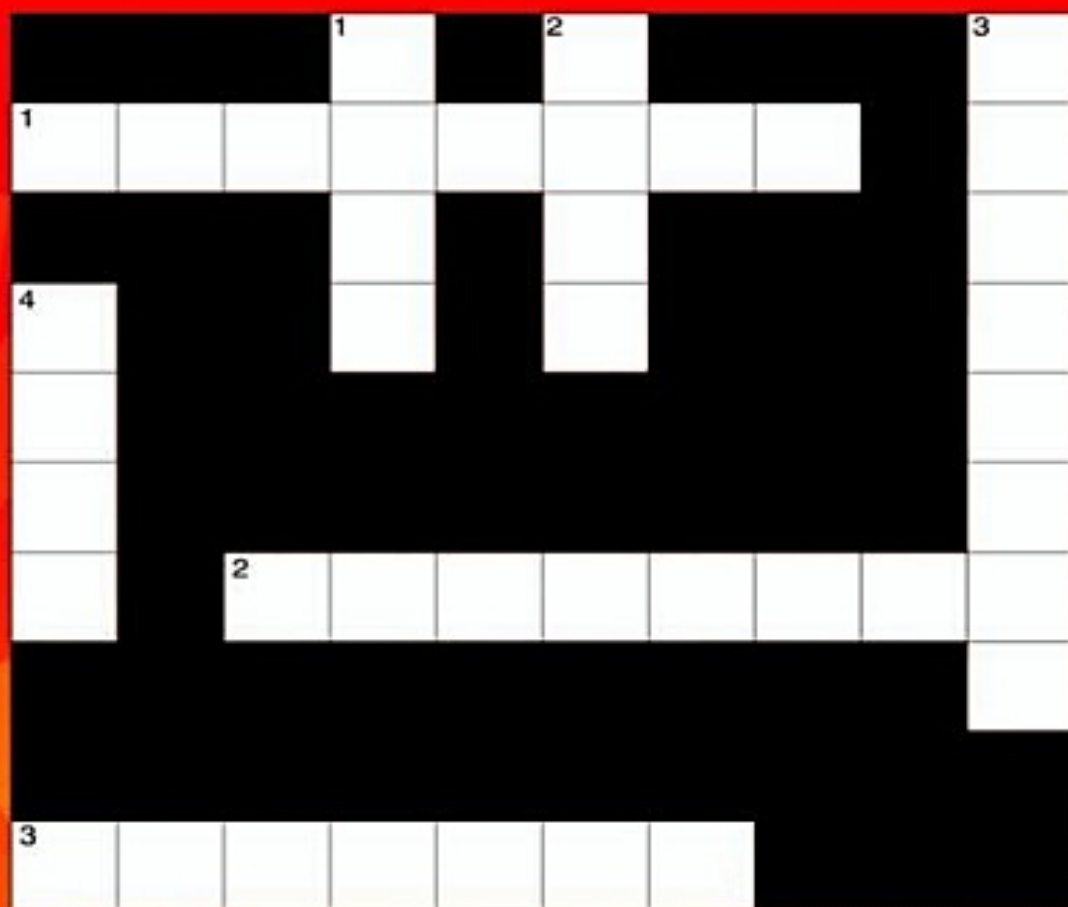
Across

1. Suryaraj teaches in this school ______________
2. Terrolene has an army of evil ______________
3. Power supply for G-man ______________

Down

1. The desert where the gateway to other dimensions is ________
2. G-man goes in search of the other ______________
3. G-man goes through the portal to enter into a parallel ________
4. Major Suryaraj was in the Indian ______________

POWER SUPPLY FOR G-man

Visit: www.parleproducts.com

मुझमें भरिए रंग, मस्ती के संग.
PARLE
Parle-G
POWER SUPPLY
Visit: www.parleproducts.com

विदुर की बहुएँ

चतुर्भुज नामक गाँव में विदुर और धर्मराज नामक दो दोस्त रहा करते थे। दोनों मध्यम वर्ग के किसान थे। गोपी और सोम विदुर के बेटे थे और धर्मराज के कोई संतान नहीं थी।

एक दिन धर्मराज ने विदुर से कहा, ''विदुर, हम दोनों पचासवें साल में क़दम रख रहे हैं। तुम्हारे दोनों बेटे लायक़ हो गये हैं। उनकी शादी करा दोगे तो तुम दादा भी बन जाओगे। अपनी वृद्धावस्था में आराम से रह सकते हो। मैं तो निस्संतान हूँ। किसी शिशु को गोद लेना चाहता हूँ तो वे मेरी जायदाद के बारे में विवरण जानना चाहते हैं।'' दर्द-भरी आवाज़ में उसने कहा।

विदुर ने, धर्मराज के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, ''एक मानव ही है, जिसे बुढ़ापे में सहारा मिलता है। उसके वारिस उसकी देखभाल करते हैं। अन्य प्राणी इस सुविधा से वंचित हैं। अब तक मैं और मेरी पत्नी सुखी हैं। बहुओं के आने के बाद क्या होगा, कुछ बता नहीं सकते। जो भी हो, हम दोनों आगे भी भाई समान रहेंगे।''

''भविष्य को लेकर तुम्हें चिंतित होने की कोई ज़रूरत नहीं, क्योंकि तुम्हारे दोनों बेटे योग्य हैं, अच्छे स्वभाव के हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि उनका विवाह भी अच्छे स्वभाव की कन्याओं से होगा।'' धर्मराज ने कहा।

गोपी और सोम ने दोनों की बातचीत सुनी। दोनों ने आपस में बातें कर लीं और उनसे मिलने उनके पास आये।

गोपी ने, धर्मराज से कहा, "चाचाजी, मैं और मेरा भाई आपका बड़ा आदर करते हैं। आपको अपना चाचा मानते हैं। हमें अप ने ही बे टे समझिये।''

धर्मराज ने भाव-विह्वल होकर कहा, ''मैं तुम दोनों के स्वभाव से अच्छी तरह से परिचित हूँ। तुम्हारे पिता को अच्छी बहुएँ मिल जाएँ तो मैं

रमेश राठी

और मेरी पत्नी तुम दोनों की छाया में आराम से ज़िन्दगी बितायेंगे।''

सोम ने कहा, ''चाचाजी, अच्छा हुआ, आपने बहुओं की अच्छाई की बात याद दिलायी। बड़े लोग कहते हैं कि ऊपर तथास्तु देवता रहते हैं। मेरे और मेरे भाई की पत्नियाँ सगी बहनें हों तो और अच्छा होगा, क्योंकि वे मिलजुलकर रहेंगी। दोनों में प्रेम बना रहेगा और उनकी तरफ़ से हमें किसी समस्या का सामना करना नहीं पड़ेगा।''

बेटे की बातों पर विदुर ने मुस्कुराकर कहा, ''हम अच्छा सोचते हों तो फल भी अच्छा ही होगा। हाल ही में नारदकुंड गाँव से एक आदमी रिश्ता लेकर आया। उस गाँव के मुखिया विश्वेश्वर की दो बेटियाँ हैं। वे हमसे रिश्ता जोड़ना चाहते हैं। अच्छा यही होगा कि तुम दोनों उन लड़कियों को देख आओ। तुम दोनों को वे लड़कियाँ अच्छी लगीं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। इसकी जिम्मेदारी तुम्हीं को सौंपता हूँ।''

सोम और गोपी ने कहा, ''तब देरी किस बात की। हम सब मिलकर जायेंगे। और उन लड़कियों को देख आयेंगे।''

दूसरे ही दिन, विदुर ने गाँव के मुखिया विश्वेश्वर को ख़बर भिजवायी कि वे उनकी बेटियों को देखने कल ही आ रहे हैं।

दूसरे दिन वे सब किराये की गाड़ी में नारदकुंड जाने के लिए निकल पड़े। विश्वेश्वर के घर के पास आये कि नहीं, विदुर की छाती में ज़ोर का दर्द होने लगा। उन्हीं की प्रतीक्षा में खडा विश्वेश्वर, विदुर को तुरंत घर के अंदर ले गया और पलंग पर लिटाया। फिर तुरंत वैद्य को बुला लाने के लिए नौकर को भेजा।

वैद्य ने आकर विदुर की परीक्षा की और कहा, ''मुझे नहीं लगता कि यह गंभीर दिल का दौरा है। कहते हैं कि छोटे सांप को भी बड़ी लाठी से मार डालना चाहिये। इसलिए हमें सावधानी बरतनी चाहिये। जो दवाइयाँ दूँगा, उनका सही उपयोग कीजिये। परंतु हाँ, एक सप्ताह तक पलंग पर ही इनका लेटे रहना बहुत ज़रूरी है।''

तब धर्मराज ने विश्वेश्वर से कहा, ''सोचा नहीं था कि ऐसा होगा। गाँव में ही एक अच्छा-सा घर हमें किराये पर दिलाइये। ज़रूरत पड़ी तो एक हफ्ते तक ही नहीं, एक महीने तक रहकर

विदुर की चिकित्सा करायेंगे।'' विश्वेश्वर कुछ कहने ही जा रहा था कि उसकी दोनों बेटियों ने इशारा करके उसे बगल के कमरे में आने को कहा।

बड़ी बेटी रागिनी ने पिता से कहा, ''पिताजी, वे हमारे घर शादी का रिश्ता तय करने आये हैं। हम उन्हें अपने ही घर में रखकर आवश्यक चिकित्सा करायेंगे। यह हमारा फर्ज़ भी बनता है।''

दूसरी बेटी मोहिनी ने भी कहा, ''यही अच्छा होगा नहीं तो हमपर तोहमत लग जायेगी कि हमने ससुर की देखभाल नहीं की और बाहर भेजकर अपने हाथ धो लिये। यह रिश्ता पक्का हो या न हो, पर उन्हें यहाँ से संतुष्ट भेजना हमारा कर्तव्य है। सब प्रकार से अच्छा यही होगा कि विदुरजी को अपने ही घर में रखें और उनकी चिकित्सा करायें।''

बेटियों की बातें सुनने के बाद विश्वेश्वर ने मुड़कर अपनी पत्नी की ओर देखा। मन ही मन बेटियों की प्रशंसा करते हुए विश्वेश्वर की पत्नी ने कहा, ''बेटियों ने जो कहा, ठीक कहा। वैसा ही कीजिये। घर आये रिश्तेदारों को किसी और घर में रखना उचित नहीं होगा। फिर आपकी मर्ज़ी।''

बगल के कमरे में ही लेटा विदुर उनकी ये बातें सुन रहा था। मन ही मन उसे इस बात पर खुशी हुई कि अपनी इस आकस्मिक बीमारी से विश्वेश्वर के परिवार के सदस्यों के स्वभाव को वह जान पाया।

विश्वेश्वर ने, अपनी पत्नी और बेटियों की बातों पर खूब सोचा-विचारा और अंत में यही निर्णय लिया कि विदुर को गाँव के किसी अच्छे घर में रखना ही ठीक होगा। उसने सब सुविधाओं से भरा एक अच्छा-सा घर ढूँढ़ा और उनके रहने का प्रबंध किया।

विदुर, धर्मराज और उसके दोनों बेटे दस दिनों तक उस घर में बिना किसी असुविधा के रहे। विदुर बहुत ही जल्दी चंगा हो गया। इसपर वैद्य ने आश्चर्य भी प्रकट किया। गाँव लौटने के पहले धर्मराज ने विदुर से कहा, ''विश्वेश्वर को कृतज्ञता जतापर निकलेंगे। मेरी समझ में नहीं आता कि पत्नी और बेटियों के ज़ोर देने के बाद भी उसने तुम्हें क्योंकर एक अलग घर में रखा?''

इसपर विदुर ने मुस्कुराते हुए कहा, ''धर्मराज, विश्वेश्वर की पत्नी और बेटियों के दिल दया व करुणा से भरे हैं।वे दूसरों का आदर करना जानती हैं। अब रही, विश्वेश्वर की बात। उनमें भी ये अच्छे गुण मौजूद हैं, पर साथ ही साथ उनमें पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान भी है। अगर वे मुझे अपने घर में रखते तो लोग यही कहते कि अपनी बेटियों की शादी कराने के लिए उसने यह षड्यंत्र रचा है। इसीलिए उन्होंने मुझे अलग घर में रखा और मेरी चिकित्सा करवायी। यद्यपि हम लोगों का रिश्ता अभी नहीं बना है और यह आवश्यक भी नहीं है कि ऐसा होगा, फिर भी उन्होंने अलग घर में रख कर भी हमारी देखभाल अपने परिवार के समान की। मुझे इस घर के सभी लोगों के स्वभाव अच्छे लगे। मुझे यह रिश्ता बहुत पसंद है। अगर विश्वेश्वर मान जाएँ तो मैं उनकी बेटियों को अपनी बहुएँ बनाने के लिए तैयार हूँ। गोपी और सोम को भी वे कन्याएँ अच्छी लगीं।''

दूसरे दिन औपचारिक रूप से विश्वेश्वर के घर में विवाह की तिथि पक्की हुई और एक महीने के अंदर ही उनका विवाह भी संपन्न हुआ।

धर्मराज और विदुर की अपेक्षा के अनुसार ही बहुओं ने भी उनके साथ अच्छा व्यवहार किया। अब उनके आनंद की सीमा नहीं रही। दोनों मित्रों के परिवार एक दूसरे के सुख-दुख में हाथ बँटाते हुए शान्तिपूर्वक जीवन बिताने लगे।

अपने ही शिकारी कुत्तों का शिकार

ऐक्टियों एक घमण्डी युवक था- सचमुच एक घमण्डी धावक और शिकारी। वह जंगल में इतनी तेजी से दौड़ सकता था कि लोगों को वह जादूगर की तरह लगता जो कहीं तो अदृश्य हो जाये और कहीं प्रकट हो जाये। शिकारी के रूप में राज्य भर में वह अद्वितीय था लेकिन इस मामले में उसे श्रेय कुछ शिकारी कुत्तों को इतनी अच्छी तरह प्रशिक्षित करने के कारण मिला था कि वे निरन्तर अपने मालिक के लिए शिकार का पीछा करते और उसे मारते या पकड़ कर ले आते।

डायना जंगल की अधिष्ठात्री देवी थी। एक बार जब वह जंगल में घूम रही थी, उसने ऐक्टियों को हवा की सरसराहट के समान दौड़ते हुए देखा। वह प्रसन्न और प्रभावित हो गई। वह भी जंगल में दौड़ना चाहती थी। लेकिन उसकी सखियों में उसका साथ देने वाली या उसके साथ आँख-मिचौनी खेलनेवाली कोई नहीं थी।

डायना ने अपने साथ दौड़ने के लिए ऐक्टियों को निमन्त्रित किया। युवक रोमांचित हो उठा। एक देवी के साथ मित्रता एक गौरवपूर्ण उपलब्धि थी। वह देवी के साथ हर रोज दौड़ लगाने लगा जो दोनों के लिए बहुत मजेदार था। ऐक्टियों के शिकारी कुत्ते भी दोनों के पीछे-पीछे दौड़ते थे।

पहले तो ऐक्टियों डायना के साथ बर्ताव में बहुत सावधान रहता था और उसके प्रति आदर का भाव रखता था। लेकिन वह धीरे-धीरे उद्दण्ड होता चला गया, जैसा कि कहावत है- अधिक जान-पहचान से घटती है दोस्ती की शान।

कभी-कभी ऐक्टियों कहता, ''यदि मैं चाहूँ तो मैं तुम्हें दौड़ में पीछे छोड़ दूँ, लेकिन मैं ऐसा नहीं करना चाहता।'' डायना मुस्कुरा देती और जवाब में कुछ न कहती, क्योंकि सच्चाई कुछ और थी। देवी होने के कारण वह, यदि चाहती तो बिजली की तरह दौड़ सकती थी।

लेकिन वह एक मरणशील को अपमानित नहीं करना चाहती थी, क्योंकि उसने आखिर उसका साथ दिया था, इसलिए उसने अपनी अलौकिक शक्तियों का सहारा नहीं लिया। फिर भी, उसने उसे चेतावनी दी कि वह उसके शरीर अथवा उसके आभूषणों को कभी हाथ न लगाये। किन्तु काश! उसकी सलाह को वह पर्याप्त महत्व दे पाता।

एक दिन गर्मी के दोपहर में जंगल के बीच एक मोहक झील में डायना स्नान कर रही थी। चारों ओर प्रकृति का सौन्दर्य बिखरा था और शानदार रंगों में हज़ारों फूल देवी को देख मुस्कुरा रहे थे। ये उनकी स्तुति में एक गीत बन गये।

यद्यपि उस घड़ी में जंगल में ऐक्टियों के आने की उम्मीद नहीं थी, और देवी के स्नान करते समय उसे आना भी नहीं चाहिये था, फिर भी, उसने वही किया जो उसे नहीं करना चाहिये था। उसने अपने शिकारी कुत्तों के साथ जंगल में प्रवेश किया और झील के निकट जाकर तट की एक शिला पर रखे उसके आभूषणों को उलट-पलट कर देखा। झील में नहाती डायना को देख वह ही-ही कर हँसने लगा।

निस्सन्देह डायना को आश्चर्य हुआ, लेकिन उससे भी अधिक वह क्रोधित हो उठी। उसने युवक पर जादू कर दिया जिससे वह उसी क्षण हिरन में बदल गया। अचानक उसके शिकारी कुत्तों ने अपने सामने एक हिरन को देखा। उन्होंने उस पर झपटने की कोशिश की। बेचारा हिरन, जो स्वयं ऐक्टियों ही था, प्राण-रक्षा के लिए भागने लगा। लेकिन उन भयानक पशुओं से वह कैसे बच पाता जिन्हें इन्होंने स्वयं अच्छी तरह प्रशिक्षण दिया था?

पलक झपकते ही शिकारी कुत्तों ने चीर-फाड़ कर उसकी धज्जियाँ उड़ा दीं। यह मानव और देव के बीच एक सुखद सम्बन्ध का दुखद अन्त था। ***(एम.डी.)***

पाठकों के लिए एक कहानी प्रतियोगिता

सर्वश्रेष्ठ प्रविष्टि के लिए २५० रु.

निम्नलिखित कहानी को पढ़ो:

परमाशिवा के बच्चे एक पालतू चिड़िया रखना चाहते थे। वह बाज़ार गया और कोई अच्छी चिड़िया ढूँढने लगा। लम्बी खोज के बाद उसे एक पिंजड़े में एक सुन्दर तोता मिला। दुकानदार ने तोते का मूल्य एक सौ रुपये बताया।

"लेकिन सौ रुपये तो बहुत अधिक मूल्य है!" परमाशिवा ने कहा।

"महाशय, यदि आप को शक है तो तोते से ही पूछ लीजिये।" दुकानदार ने कहा।

परमाशिवा पिंजड़े के पास गया। "क्या तुम्हारा मूल्य एक सौ रुपये है?"

"क्यों शक करते हो?" तोते ने जवाब दिया।

परमाशिवा सौ रुपये देकर चिड़िया को घर ले गया। बच्चों को बहुत खुशी हुई। लेकिन परमाशिवा ने महसूस किया कि उसे धोखा दिया गया है।

- परमाशिवा को ऐसा अनुभव क्यों हुआ?
- क्या उसने तोते को लौटा दिया?
- क्या बच्चों को उसकी जगह पर कुछ और दिया गया?

अपनी प्रतिक्रिया १००-१५० शब्दों में दो और कहानी का एक उपयुक्त शीर्षक बताओ। अपनी प्रविष्टि के साथ निम्नलिखित कूपन को भर कर एक लिफाफे में भेज दो जिस पर "पढ़ो और प्रतिक्रिया दो" लिखा हो।

अन्तिम तिथि: ३१ जुलाई २००५

नाम --उम्र-----------जन्मतिथि----------------------

विद्यालय --कक्षा-----------

घर का पता --

--पिनकोड----------------------

अभिभावक के हस्ताक्षर　　　　　　　　　　प्रतियोगी के हस्ताक्षर

चन्दामामा इंडिया लिमिटेड

८२, डिफेंस ऑफिसर्स कालोनी, इक्कातुथंगल, चेन्नई - ६०० ०९७.

मंत्र की महिमा

ब्रह्मदत्त जिस समय काशी राज्य पर शासन करते थे, उन दिनों बोधिसत्व ने एक गाँव में चर्मकार के रूप में जन्म लिया। वे अपने पेशे को चलाते हुए एक सिद्ध के आश्रय में गये और उनके द्वारा एक अपूर्व मंत्र सीख लिया।

उस मंत्र की महिमा के द्वारा बोधिसत्व किसी भी समय आम के पेड़ों में आम उगा सकते थे। वे रोज सबेरे एक टेढ़ी लाठी कंधे पर डाल जंगल में एक आम के पेड़ के पास पहुँच जाते। वहाँ पर पेड़ से सात फुट की दूरी पर खड़े हो मंत्र-पाठ करते थे। इसके बाद डालों पर मंत्र-जल छिड़क देते थे। दूसरे ही क्षण आम की डालों में कोंपलें उग आतीं, पुष्पित हो फल लग जाते।

एक दिन जब बोधिसत्व आम के पेड़ में फल उगा रहे थे, तब दाभों की खोज में जंगल में आये हुए सुनंद नामक एक ब्राह्मण युवक ने देखा। वह युवक जंगल के समीप के एक अग्रहार का निवासी था। वह पढ़नेलिखने में कच्चा निकला, मगर वह हमेशा इस बात का सपना देखा करता था कि किसी देवी की कृपा से पल भर में वह पंडित बन जाये और सोना व चांदी पाकर वैभवपूर्ण जीवन बिताये।

बोधिसत्व जब जंगल से घर लौटे, तब सुनंद ने बोधिसत्व के हाथ से टेढ़ी लाठी और आम की गठरी लेकर भीतर पहुँचा दिया। इसके बाद उसने अपना परिचय दिया और बड़ी लगन के साथ उनके घर के काम-काज देखने लगा।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन बोधिसत्व ने अपनी पत्नी से कहा, ''जानती हो, यह लड़का हमारे आश्रय में क्यों आया है? उसके मन में सभी मौसमों में आम की सृष्टि कर सकने वाले मंत्र सीखने की इच्छा है। यह बड़ा ही लोभी है। अगर मैं इस पर कृपा करके मंत्र सिखला भी दूँ तो भी ज़्यादा दिन वह मंत्र उसके लिए काम न देगा।''

सुनंद के व्यवहार पर बोधिसत्व की पत्नी बड़ी ख़ुश हुई और उस पर उसे दया भी आई। उसने एक दिन अपने पति से कहा, ''यह लड़का हमारे घर के सारे काम-काज करता है और हमारे बेटे से भी ज़्यादा विनयशील बना रहता है। मंत्र उसके लिए काम क्यों न देगा? अगर काम नहीं देगा, तो इसका दोष उसी का होगा। इसलिए आप इसको मंत्र का उपदेश ज़रूर दीजिए।''

बोधिसत्व थोड़ी देर सोचते रहे, अपनी पत्नी की बातों का संकेत समझ गये और सुनंद को मंत्रोपदेश करने को मान लिया।

दूसरे दिन बोधिसत्व ने सुनंद को बुलाकर कहा, ''बेटा, यह एक अपूर्व मंत्र है, अगर तुम इस मंत्र का उपयोग न्यायपूर्वक करोगे तो तुम्हें धन और यश दोनों मिल जायेंगे। लेकिन एक बात याद रखो। अगर कोई तुम से यह पूछे कि तुमने यह मंत्र किसके यहाँ सीखा है, तब तुम इसका रहस्य प्रकट न करो। तुमने यदि मंत्र का रहस्य प्रकट किया तो उसी क्षण से मंत्र की महिमा जाती रहेगी।'' यों समझाकर बोधिसत्व ने सुनंद को मंत्रोपदेश दिया।

सुनंद मंत्र सीखकर घर पहुँचा, आम की सृष्टि करके उन्हें बेचकर धन कमाने लगा।

इस तरह सुनंद ने बेमौसम के जो आम पैदा किये, उनमें से एक फल काशी राजा के हाथ लगा। वे आश्चर्य में आ गये, उनकी सृष्टि करने वाले का पता लगाकर सुनंद को अपने यहाँ बुला भेजा।

राजा ने सुनंद से पूछा, ''तुम बेमौसम इन आमों की सृष्टि कैसे करते हो? यह देवताओं की सृष्टि है, या मानव की? सच बतला दो।''
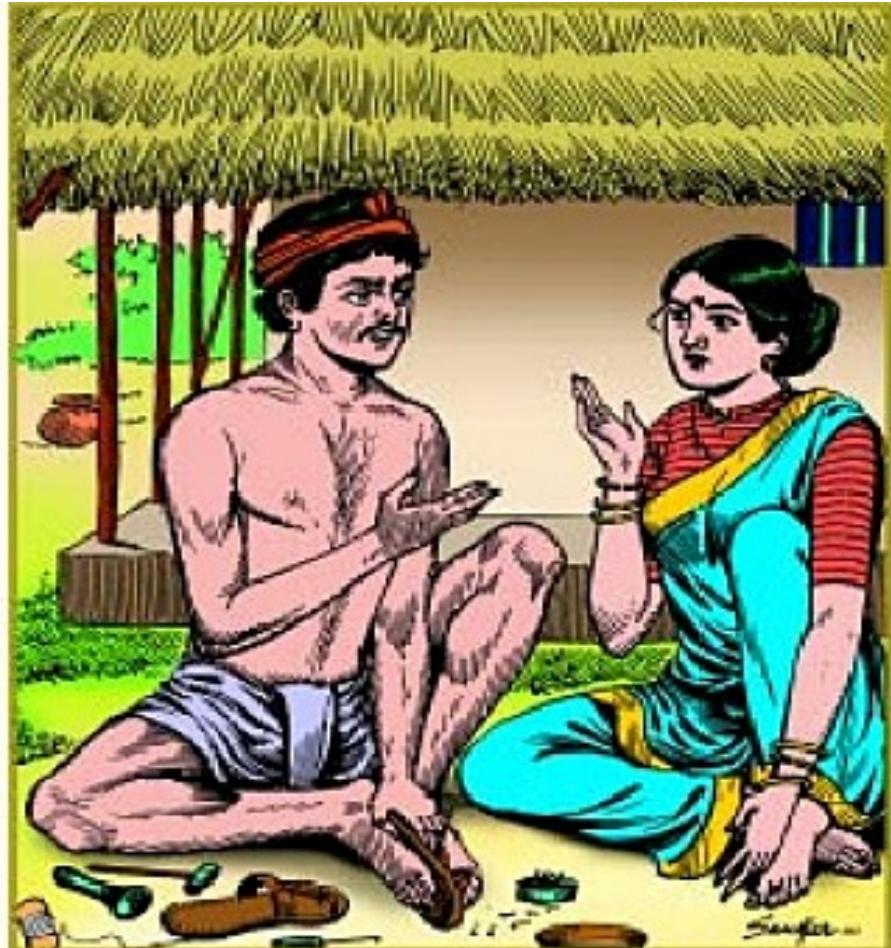
सुनंद ने प्रसन्न होकर राजा से निवेदन किया, ''महाराज, मैं जो आम बेचता हूँ, इनकी सृष्टि मैं खुद करता हूँ। मैं एक महा मंत्र जानता हूँ। उस मंत्र की महिमा के द्वारा ही मैं बेमौसम आम के पेड़ों में फल उगा देता हूँ।''

यह उत्तर पाकर राजा और आश्चर्य में आ गये और बोले, ''ओह, ऐसी बात है! मेरे मन में उस मंत्र की महिमा को स्वयं देखने की इच्छा है। क्या तुम मेरे उद्यान के पेड़ों में अपने मंत्र की महिमा से आम पैदा कर सकते हो?''

सुनंद ने ख़ुशी के साथ मान लिया। दूसरे दिन राजा अपने परिवार को साथ लेकर उद्यान वन में पहुँचे। सुनंद वहाँ पर एक पेड़ से सात फुट की

दूरी पर खड़ा हो गया। मंत्र-पठन करके कमण्डलु से जल लेकर आम की डालों पर छिड़क दिया। तुरंत सैकड़ों आम के फल नीचे गिर गये।

इस अद्‌भुत को देख राजा और उनका परिवार विस्मय में आ गये। सबने फल चखकर देखा। उसका स्वाद अनोखा था। इस पर राजा ने सुनंद की बड़ी प्रशंसा और उसका सत्कार भी किया। फिर सुनंद से पूछा, ''ऐसी महिमा वाले मंत्र का उपदेश करने वाले महा ज्ञानी कौन हैं?''

सुनंद की समझ में न आया कि क्या जवाब दे? उस वक़्त उसे अपने गुरुजी की बातें याद आयीं कि मंत्र का रहस्य बताने पर मंत्र की शक्ति जाती रहेगी। फिर भी उसने सोचा कि जिस मंत्र को कंठस्थ कर लिया है, उसकी शक्ति कैसे जायेगी! ये सब गुरुजी की आडंबरपूर्ण बातें हैं। यों सोचकर उसने राजा को सच्ची बात बता दी कि उसने यह मंत्र कहाँ और किससे सीखा है।

इस पर राजा सुनंद का मजाक़ उड़ाते हुए बोले, ''ओह, ऐसी बड़ी महिमा वाले मंत्र को तुमने एक चर्मकार से सीखा है? ब्राह्मण कवंश में जन्म लेकर तुम इहलोक के सुख-भोगों के लोभ में पड़कर अपने स्वधर्म को भूल गये हो? यह बड़ा ही नीचतापूर्ण कार्य है।''

राजा के मुँह से ये बातें सुन सुनंद लज्जित हो सर झुकाये चुपचाप अपने घर लौट गया।

थोड़ा समय गुजर गया। एक दिन काशी राजा के मन में आम खाने की इच्छा जगी। उन्होंने सुनंद को बुला कर अपनी इच्छा बताई। इस पर सब लोग उद्यान वन में पहुँचे।

सुनंद पहले की भांति आम के पेड़ से सात फुट की दूरी पर खड़े हो मंत्र-पाठ करने को हुआ, लेकिन बड़ी देर तक याद करने पर भी मंत्र याद न आया। तब जाकर सुनंद ने समझ लिया कि गुरुजी के आदेश का अतिक्रमण करने की वजह से मंत्र की महिमा जाती रही है।

राजा चकित हो पेड़ की ओर देखते रहे, तब सुनंद ने उन्हें बताया, ''महाराज, मैंने अपने गुरुजी के आदेश का उल्लंघन किया है! इसीलिए मैं मंत्र की महिमा खो बैठा हूँ।'' यों कहकर चिंतापूर्ण चेहरा लिए सुनंद अपने घर लौट गया।

विष्णु पुराण

श्रीकृष्ण ने अर्जुन के रथ को युद्ध भूमि में ले जाकर दोनों सेनाओं के बीच खड़ा कर दिया।

अर्जुन ने शत्रु सेना पर नज़र दौड़ाई। उससे लड़ने के लिए उसके दादा, पिता तुल्य गुरु जन, आचार्य तथा बन्धु-मित्रगण सभी तैयार खड़े थे। उन्हें देख कर अर्जुन का मन शिथिल हो गया, "क्या राज्य के लिए अपने प्रिय जनों का ही वध करना होगा? नहीं, नहीं! इनके खून से सना हुआ राज्य लेकर मैं नरक का भागी नहीं बनना चाहता। मुझे ऐसा राज्य नहीं चाहिए। मैं ऐसे राज्य के लिए कभी युद्ध नहीं करूँगा।"

वे शिथिल होकर रथ के पिछले भाग में लुढ़क गये। हाथ से धनुष और तूणीर गिर पड़े। उनका मन शोक के अथाह सागर में डूब गया।

श्री कृष्ण ने अर्जुन का यह हाल देख कर उन को समझाया, "हे अर्जुन! युद्ध क्षेत्र में विवेक खो कर अस्त्र-शस्त्र त्याग देना क्षत्रिय के लिए अधर्म है। देश और काल के अनुसार अपने कर्त्तव्य का पालन ही सबसे बड़ा धर्म है।

"वास्तव में परमेश्वर ही एक मात्र कर्त्ता है। मनुष्य केवल निमित्त मात्र है। अधर्म और अन्याय को मिटा कर सत्य और न्याय की स्थापना करने में नर नारायण के हाथ में साधन मात्र है।

"जब-जब संसार में दुष्ट लोग बढ़ जाते हैं और सत्य तथा धर्म की हानि होती है, तब-तब दुष्टों को नष्ट करके सत्य और धर्म की स्थापना करने के लिए हर युग में नारायण अवतार लिया करते हैं। उसी अवतार के रूप में मेरा स्मरण करके मेरी शरण में आ जाओ और मेरे आदेश का पालन करो। तुम अपना कर्तव्य करो तथा उस का फल

मुझ पर छोड़ दो। एक सच्चे क्षत्रिय कर्त्तव्य का पालन करो। और अपना गाण्डीव उठाकर युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।''

इस उपदेश के बाद भी अर्जुन का यह सन्देह बना रहा कि श्री कृष्ण नारायण के अवतार हैं। तब श्री कृष्ण ने अर्जुन के संदेह को दूर करने के लिए अपने विराट रूप के दर्शन कराये।

श्री कृष्ण के विराट रूप में अर्जुन ने ब्रह्माण्ड की सृष्टि, स्थिति और प्रलय तीनों को एक साथ देखा। कर्त्ता, कर्म और क्रिया तीनों में उस प्रभु की लीला नज़र आई। सब कुछ लय कर देने वाला महाकाल भी उसी विराट रूप का एक अंश था।

इस विराट रूप को देखकर अर्जुन का मन शान्त हो गया। उनकी शंका क ा निवारण हो गया। उनकी सारी चिन्ताएँ दूर हो गईं। मन में केवल एक ही भाव रह गया, ''श्री कृष्ण ही मेरा संचालन कर रहे हैं, मैं उनका यंत्र मात्र हूँ।''

इस भाव के साथ ही अर्जुन के अंग-अंग में स्फूर्ति आ गई। वे उत्साह के साथ उठ खड़े हुए तथा गाण्डीव और तूणीर धारण करके उन्होंने अपना शंख बजाया।

फिर दोनों ओर की सेनाएँ भूखे सिंहों की भाँति एक दूसरे पर टूट पड़ीं। अठारह दिनों तक घोर संग्राम चलता रहा। पाण्डवों की विजय हुई।

शान्ति-दूत के रूप में श्री कृष्ण ने जो भविष्य वाणी की थी वह सत्य प्रमाणित हुई। भीम ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। द्रौपदी के खुले केशों में फिर से जूड़ा बँध गया।

अभिमन्यु के रूप में कालनेमि ने वीर गति प्राप्त की। कर्ण के भीतर से सहस्र कवच का अंश निकल कर शिव में समा गया। अर्जुन और कृष्ण के रूप में नर-नारायण का अवतार पूरा हो गया। विष्णु ने, भूदेवी को दिये वचन के अनुसार पृथ्वी पर से पाप का बोझ खत्म कर दिया।

धृतराष्ट्र का हृदय दुर्योधन की मृत्यु से शोक और आक्रोश से भर गया। इस पर उन्होंने अपने बेटे की हत्या का बदला लेने के लिए भीम से मिलने की इच्छा प्रकट की।

श्री कृष्ण ने उनके मन की बात जान कर लोहे की बनी भीम की प्रतिमा उनके सामने कर दी। धृतराष्ट्र ने उसे अपने आलिंगन में लेकर चूर-चूर कर दिया।

गान्धारी ने पुत्र-शोक में व्याकुल होकर श्री

कृष्ण को शाप दे दिया, ''हे कृष्ण, कौरवों की भाँति यादव-वंश भी नष्ट हो जायेगा।''

द्रौपदी के सोये हुए पाँचों पुत्रों को द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने मार दिया था, इसलिए द्रौपदी की इच्छा के अनुसार अर्जुन और श्री कृष्ण ने उसे पकड़ कर द्रौपदी के सामने कर दिया।

द्रौपदी ने यह कह अश्वत्थामा को छोड़ दिया, ''शाश्वत नारकीय जीवन ही तुम्हारा उचित दण्ड है। मृत्यु तो तुम्हें पीड़ा मुक्त कर देगी।''

श्री कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने अश्वत्थामा के सिर से मणि निकाल कर उसे छोड़ दिया। मणि के निकलते ही अश्वत्थामा मानसिक रोग से पीड़ित होकर पागलों की तरह इधर-उधर भटकने लगा।

अश्वत्थामा ने पाण्डव बंश को निर्मूल करने के लिए उत्तरा के गर्भस्थित शिशु पर भी अस्त्र क प्रयोग किया था। अस्त्र के प्रभाव से मृत शिशु पैदा हुआ। श्री कृष्ण ने अपने पाँव से दबा कर उस बालक के प्राण की परीक्षा ली और उसे नया जीवन प्रदान किया। इसीलिए बालक का नाम परीक्षित रखा गया। इसी बालक ने आगे चल कर पाण्डवों का बंश चलाया।

शर-शैय्या पर लेटे भीष्म पितामह इच्छा मृत्यु के लिए उत्तरायण की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने मृत्यु-शैय्या से ही युधिष्ठिर को राजधर्म का उपदेश दिया। उत्तरायण आते ही देह त्याग कर वे वसुओं में जा मिले।

एक दिन द्वारका में विश्वामित्र मुनि आये हुए थे। मूर्ख और उद्दण्ड यदुवंशियों ने सांब को गर्भवती स्त्री का वेश पहना दिया और विश्वामित्र के पास ले जाकर मज़ाक से पूछा, ''कहिये महाराज! इस स्त्री के गर्भ से पुत्र होगा या पुत्री?''
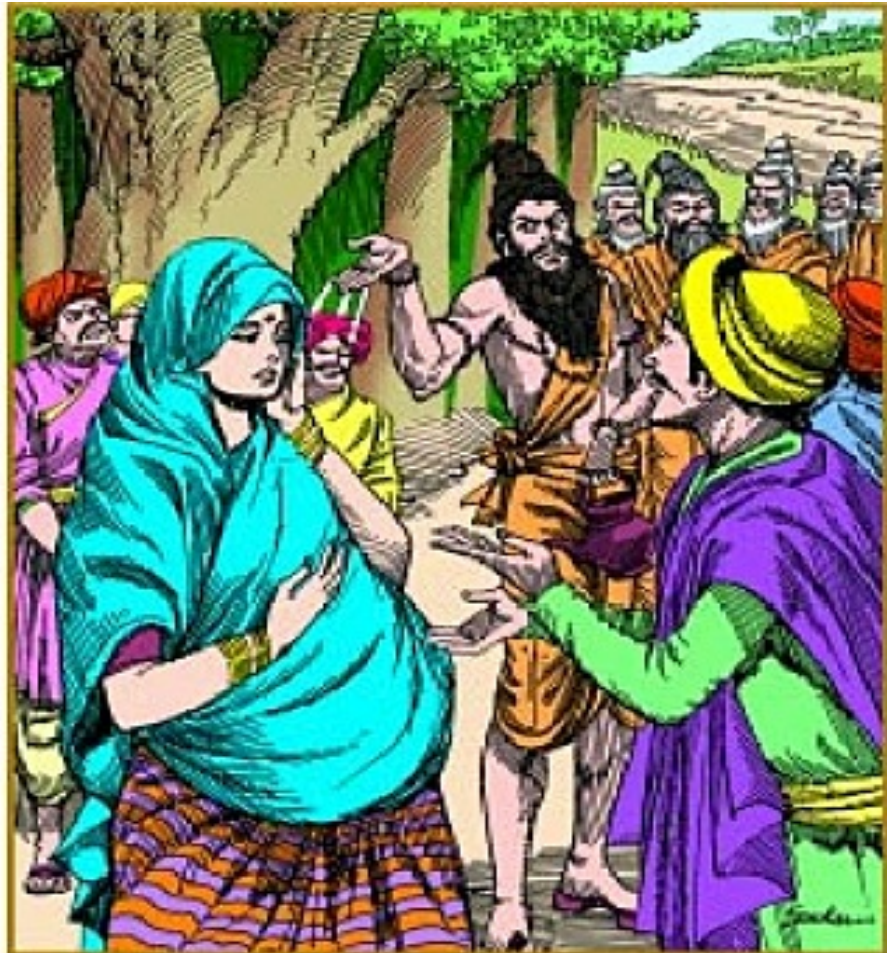
विश्वामित्र ने इस मज़ाक से कुपित होकर शाप दे दिया, ''मूर्ख और दुष्ट यदुबंशिनी!'' इसके गर्भ से एक मूसल पैदा होगा जो सभी यदुवंशियों को निर्मूल कर देगा।''

उद्दण्ड और घमण्डी यादव उसके बाद भी ऋषि का उपहास करते रहे। जब सांब ने नारी वेश हटाया तब सचमुच उसमें से एक मूसल निकला। यह देख कर यदुवंशी सब डर गये।

कुछ दिनों के बाद युद्ध समाप्त होने पर श्रीकृष्ण हस्तिनापुर से द्वारका लौटे। तब यादवों ने उन्हें इस घटना से अवगत कराया। श्री कृष्ण
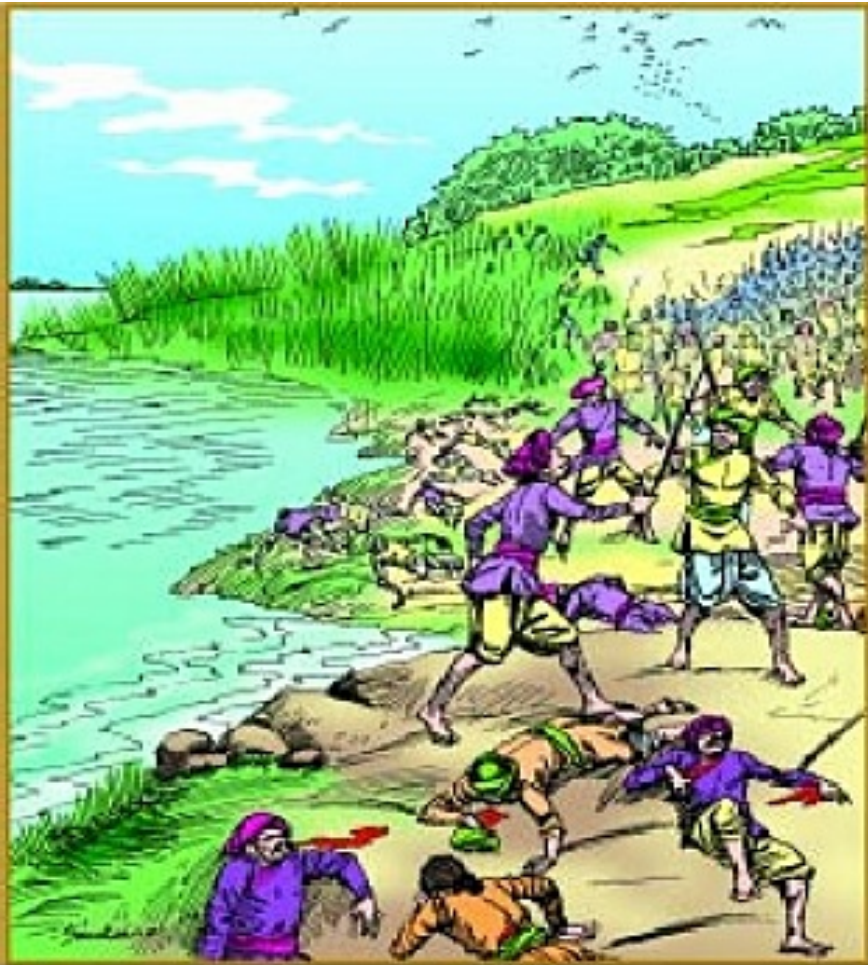
ने मूसल के छोटे-छोटे टुकड़े बना कर उन्हें समुद्र में फेंक देने के लिए कहा।

उसका एक टुकड़ा एक मछली निगल गई। वह मछली एक व्याध के हाथ लगी। मछली के पेट से उस लोहे के टुकड़े को निकाल कर उसने अपने तीर की नोक पर लगा लिया। कालान्तर में उसी तीर से श्री कृष्ण का प्राणान्त हुआ।

अन्य टुकड़े लहरों के साथ बह कर किनारे पर एकत्र हो गये और कंटीले कुश घास के रूप में उग आये।

कुछ वर्षों के बाद एक दिन द्वारका के सभी यादव आमोद-प्रमोद के लिए समुद्र किनारे पहुँचे। वे सब के सब मदिरा पान करके अपना विवेक खो बैठे। नशे में वे अपनी-अपनी बहादुरी की डींग मारने लगे और आपस में मार-काट करने लगे। पास में और कुछ न पाकर कुश की झाड़ियों से ही एक-दूसरे पर प्रहार करने लगे और लड़ते-लड़ते वहीं ढेर हो गये। इस प्रकार ऋषि का शाप सत्य सिद्ध हुआ। उस मूसल ने ही सारे यदुवंशियों का सर्वनाश कर दिया।

जब बलराम को इस दुखद घटना का पता चला तब वे विरक्त हो जंगल में जाकर समाधिस्थ हो गये। उन्होंने योग द्वारा अपना शरीर त्याग दिया और शेष नाग के रूप में वैकुण्ठ पहुँच गये।

श्री कृष्ण ने द्वारका बसाने के लिए समुद्र से भूमि माँगी थी। उसे सात दिनों में समुद्र को वापस करना था। इसलिए श्री कृष्ण ने अर्जुन को यह सन्देश भेजा, ''तुम शीघ्र स्वयं आकर द्वारका के बच्चों, बूढ़ों और स्त्रियों को अपने साथ इन्द्रप्रस्थ ले जाओ।''

श्री कृष्ण ने तत्पश्चात अपने प्रिय सखा उद्धव को परम तत्व का उपदेश दिया तथा उन्हें अपने वास्तविक रूप के दर्शन कराये।

यादवों के अन्त के साथ ही अवतार के रूप में श्री कृष्ण का कार्य सम्पन्न हो गया।

अन्त में श्री कृष्ण ने समुद्र तट पर जाकर दिव्य वेणुगान किया। उनकी मुरली के स्वर से हिन्दोल, यमुना-कल्याणी तथा देव गान्धार राग निकले। समस्त प्रकृति पुलकित हो उठी। समुद्र का जल शान्त हो गया। इसके बाद पेड़ की ओट में एक शिला पर श्री कृष्ण ने विश्राम की मुद्रा में अपने पाँव पसारे। एक व्याध ने दूर से श्री कृष्ण को देख कर उन्हें हिरन समझ लिया और उन पर

बाण छोड़ दिया। बाण श्री कृष्ण के तलवे में लगा। यह वही बाण था जिसकी नोक पर मछली के पेट से निकले मूसल का टुकड़ा लगा था। इस तरह श्री कृष्ण का भी अन्त उसी मूसल से हुआ जिसने सभी यादवों का संहार किया।

एक बार भ्रमण करते हुए द्वारका में दुर्वासा ऋषि आये थे। उन्होंने श्री कृष्ण से खाने के लिए खीर माँगी। फिर क्रोध में आकर उन्हें खीर को अपने शरीर में लपेटने के लिए कहा। श्री कृष्ण ने अपना तलबा छोड़ कर शरीर के बाकी हर हिस्से में खीर लपेट ली थी। तब दुर्वासा ने श्री कृष्ण से कहा था कि केवल तलवे से ही तुम्हारे प्राणों को खतरा हो सकता है। शरीर का बाकी हिस्सा दुर्वासा के वरदान से बज्र बन चुका है।

तलवे में बाण लगते ही खून की धारा बह निकली। थोड़ी देर बाद शिकारी अपना शिकार लेने के लिए निकट आया। श्रीकृष्ण को पीड़ा से कराहते देख वह भी फूट-फूट कर रोने और पछताने लगा।

श्री कृष्ण ने व्याध को समझाते हुए कहा, ''तुम मेरे लिए दुख न करो। रामावतार में मैंने पेड़ की ओट लेकर बालि को मारा था। तुम उस समय बालि के पुत्र अंगद थे। तुमने इस जन्म में मेरे उसी पाप का बदला लिया है। कर्म का फल अनिवार्य है। इसके लिए चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है।'' यह कह कर श्रीकृष्ण ने शिकारी को अपने रामावतार के स्वरूप का दर्शन कराया। राम के दर्शन होते ही शिकारी को अपने
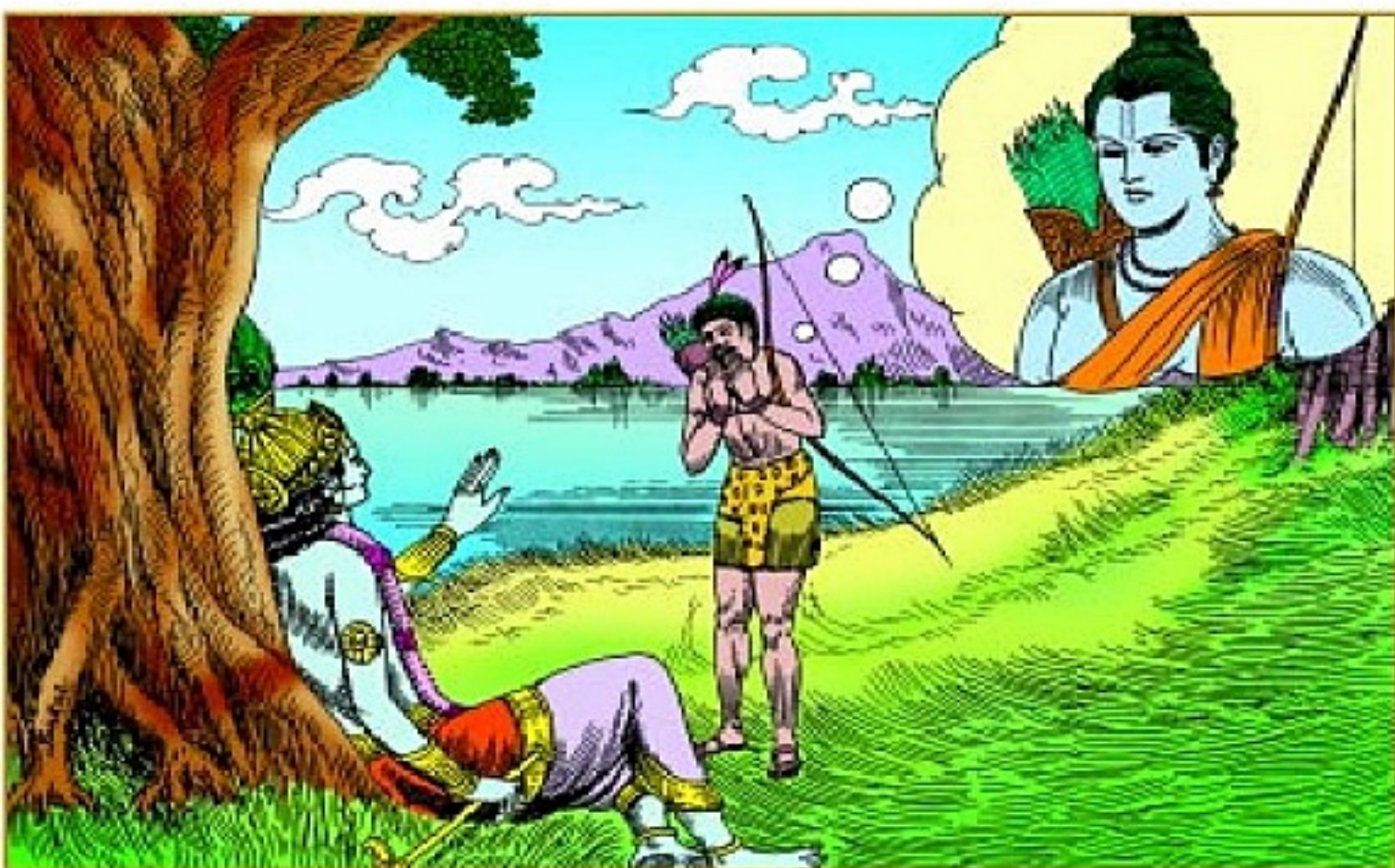
पूर्व जन्म का स्मरण हो आया। वह राम की भक्ति में तन्मय हो गया और उसी तन्मयता में वह अपना शरीर त्याग कर श्री राम मय हो गया।

तभी श्री कृष्ण का सारथी उनकी खोज करता हुआ वहाँ आ पहुँचा और श्री कृष्ण को उसस्थिति में देख कर बिलख-बिलख कर रोने लगा। श्री कृष्ण ने उसे सांत्वना देते हुए कहा, ''तुम तुरन्त द्वारका जाकर यादवों को कहो कि वे नगर को अविलम्ब खाली कर दें। अर्जुन को यह संवाद भेज दो कि वह यादव वंश की सभी स्त्रियों को अपने साथ ले जाये। उद्धव और अक्रूर को मेरा स्नेह और आशीर्वाद दो।''

उनका सारथी आँखों में आँसू और भारी हृदय लिए वहाँ से चल पड़ा।

श्री कृष्ण ने एक बार फिर मुरली का स्वर छेड़ा। वह एक अद्भुत और अपूर्व राग था। इसके बाद उन्होंने दैहिक लीला समाप्त कर दी और विष्णु के दिव्य रूप में बैकुण्ठ की शेष-शैय्या पर आ गये।

श्री कृष्ण के देह त्यागते ही सागर का जल उमड़ पड़ा और द्वारका जलमग्न हो गया।

श्री कृष्ण के स्वर्ग चले जाने के बाद उद्धव ने उनके आदेशानुसार जन-जन में कृष्ण भक्ति का प्रचार किया।

श्री कृष्ण मनुष्य के रूप में विष्णु के अवतार थे और अपनी लीला द्वारा लोगों में ईश्वर-भक्ति का संचार करने आये थे।

उनके जाने के बाद ही कलियुग का प्रवेश हो गया। वे जानते थे कि कलियुग में पाप का प्रभाव इतना बढ़ जायेगा कि मनुष्य में तपस्या की शक्ति क्षीण हो जायेगी। इसीलिए मनुष्य की मुक्ति के लिए सरल साधन के रूप में वे भक्ति का बीज बो गये।

कृष्णावतार की एक महान भेंट के रूप में गीता निस्सन्देह कलियुग के महासागर में डूबती मनुष्यता के लिए एक मात्र नौका का काम करेगी। इस महान ग्रन्थ में स्वयं प्रभु के मुख से निकले अमृत बचन वेद-वेदान्तों के सार तत्व हैं।

गीता की महानता के बारे में किसी ने ठीक ही कहा है- वेद-वेदान्त गौएं हैं। श्री कृष्ण दोग्धा यानी उन गौओं को दुहनेवाले हैं। अर्जुन बछड़ा है जो गीता रूपी अमृत का पान कर रहा है।

भूत का पिंड छूट गया

वाणी और वर्मा के कोई संतान न थी। पर वे इतने भले थे कि सारे गाँव के लोग उनके भलेपन की सदा चर्चा किया करते थे।

एक दिन रात को मूसलधार बर्षा हो रही थी। बर्मा और बाणी खाने के लिए बैठने ही बाले थे कि बाहर से किसी ने जोर से दर्वाजे पर दस्तक दी। किवाड़ खोलकर देखा तो वर्षा में भीगा एक युवा दंपति उन्हें दिख़ाई दिया।

''शहर में जाते हम वर्षा में फंस गये। क्या आज की रात आप के घर में आश्रय मिल सकता है?'' उस दंपति ने पूछा।

''अन्दर आ जाइये।'' इन शब्दों के साथ वाणी ने उनका स्वागत किया, खाना खिलाकर उनके सोने का प्रबंध किया।

उनके भोजन करने के बाद थोड़ा ही खाना बचा था। बाणी ने उसे अपने पति को खाने को कहा। क्योंकि फिर से खाना बनाने के लिए लकड़ियाँ न थीं, भीग गई थीं।

वर्मा ने हठ किया, ''हम दोनों आधा-आधा खा लेंगे।'' इसके बाद दोनों ने बात करते थोड़ा-थोड़ा खा लिया और सो गये।

सबेरे किसी के रोने की आवाज़ सुनकर वे चौंककर उठ बैठे। घर के किवाड़ खुले थे। ड्योढ़ी पर रात को आई हुई औरत फूट-फूटकर रो रही थी। इस पर वाणी और वर्मा अचरज में आ गये और उसके रोने का कारण पूछा।

''मैं क्या बताऊँ? मेरी गृहस्थी डूब गई। रात को मैं इस घर में न आती तो अच्छा होता। मेरे पति आप दोनों का सरल प्रेम देख बोले, ''क्या तुमने कभी इस गृहिणी जैसा मेरे साथ प्यार किया है? जो पत्नी अपने पति के साथ प्यार नहीं कर सकती, वह पत्नी ही क्यों?''

इसके बाद मेरे समझाने पर भी चले गये। वे बड़े ही हठी हैं, फिर लौटकर आनेवाले नहीं हैं।'' सिसकियाँ लेते बोली। उस का नाम चन्द्रमती था।

२५-वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

वर्मा ने बड़ी उद्विग्नता के साथ चन्द्रमती के पति की खोज़ की। पर कहीं उसका पता न चला।

"मैं जानती हूँ, वे लौटकर नहीं आयेंगे। मेरा अपना तो कोई नहीं है। किसी कुएँ में कूदकर जान दे दूँगी।" यों कहते चन्द्रमती फिर रो पड़ी।

उसकी हालतपर उस दंपति का दिल पिघल उठा। उन लोगों ने समझाया, "तुम बिलकुल चिंता न करो। अपने पति के लौटने तक तुम हमारे ही घर रहो।" उस दिन से चन्द्रमती उस परिवार की एक सदस्या के रूप में रहने लगी। वह देखने में नरम स्वभाव की सी लगी। रात को वही रसोई बनाती थी।

एक महीना बीत गया। वर्मा का बचपन का दोस्त मुरारी चार-पाँच दिन वर्मा के घर बिताने के ख़्याल से आया। वह दो-चार महीनों में एक बार अवश्य आया करता था। पिछली बार जब आया था, चन्द्रमती न थी। उसने वर्मा के द्वारा चन्द्रमती की सारी कहानी जान ली। उस दिन रात को चन्द्रमती ने ही सब को खाना परोसा। भोजन के बाद मुरारी दालान में खाटलगाकर लेट गया।

मगर बड़ी देर तक मुरारी को नींद नहीं आई। आधी रात के वक़्त कोई आहट पाकर उसकी आँख खुल गई। चन्द्रमती हाथ में दिया लेकर धीरे से रसोई घर के किवाड़ खोल रही थी। रसोई घर के उस पार की खिड़की पर किसी के द्वारा दस्तक देने की आवाज़ सुनाई दी।

मुरारी को चन्द्रमती का व्यवहार और खिड़की पर से आहट सुनकर संदेह हुआ। चन्द्रमती के रसोई घर में पहुँचते ही मुरारी झट से उठ बैठा। छोटी खिड़की में से रसोई घर के अन्दर झांका। चन्द्रमती एक पात्र में चावल, दाल, सब्जी और दही रखकर खिड़की में से भीतर पहुँचे हाथों में थमा रही थी।

खिड़की के उस पार का व्यक्ति कह रहा था, "और कितने दिन यों आधी रात को भोजनकरना होगा? किसी उपाय से तिजोरी का धन हड़पकर जल्दी आ जाओ।" वह व्यक्ति अंधेरे में था, इसलिए मुरारी को दिखाई नहीं दिया।

"इन लोगों का विश्वास अभी अभी मुझ पर जम रहा है। जल्दी ही चाभियों का गुच्छा मेरे हाथ में आ जाएगा। तुम थोड़ा सब्र करो।" चन्द्रमती ने कहा।

"अरी चोर की बच्ची! बाहर से भोली बनकर मेरे दोस्त की उदारता को आसरा बनाकर अपने मर्द के साथ मिल कर यह नाटक रच रही हो! हाँ, देखती रह जाओ, मैं तुम्हारा नाटक बंद करवा देता हूँ।" यों मुरारी ने अपने मन में सोचा। तब जाकर वह लेट गया। फिर उसने निश्चय किया कि चन्द्रमती का यह समाचार वाणी-वर्मा को सुनाकर उनके मन को दुखाये बिना उनके घर से भूत का पिंड छुड़ा देना है।

दूसरे दिन सबेरे मुरारी ऊँची आवाज़ में वर्मा से कहने लगा, "बाप रे बाप! रात को मैं पल भर भी सो नहीं पाया। लगता है कि इस घर में कोई भूत घुस आया है। मैंने पूरब की ओर जो खाट लगाई थी, उसे पश्चिम की ओर खींच ले गया है। खिड़की में पीने के जल का जो बर्तन रखा था, वह ख़ाट के नीचे पहुँच गया है। मैं तो हिम्मतवर हूँ, दूसरा होता तो मर जाता।"

वाणी और वर्मा ये बातें सुन घबरा गये और बोले, "तब क्या ओझा को बुलवा लें?"

"आप घबराइये नहीं। मैं सब प्रकार के भूतों को भगा सकता हूँ।" मुरारी ने उन्हें हिम्मत बंधवाई। दूसरे दिन वह बाजार से पायल ख़रीद लाया और रात को जब-तब आवाज़ करने लगा। इसके बाद उसने तकिये को चारपाई पर सीध में लगाया, उस पर कुद्दा डाल कर पिछवाड़े में गया, रसोई घर की खिड़की पर दस्तक दी।

बड़ी देर बाद हिम्मत कर चन्द्रमती आई, पात्र में सारी चीज़ें लगाकर उसने मुरारी के हाथों में वह पात्र थमा दिया। मुरारी झट से घर के अंदर आया। उस पात्र को चन्द्रमती की चारपाई पर रखकर मुरारी ने चारपाई को दूसरी ओर खींचा, तब चुपचाप आकर अपनी खाट पर लेट गया।

चन्द्रमती थोड़ी देर तक पात्र की प्रतीक्षा में खड़ी रही, खिड़की के समीप बाहर अपने पति का पता न पाकर रसोई घर के किवाड़ बंद किये, अपने कमरे में पहुँचकर चीख़ उठी।

उस चिल्लाहट से वर्मा और वाणी चौंककर जाग चन्द्रमती की खाट के पास दौड़े आये। वहाँ पर मुरारी भी इस तरह आ पहुँचा, मानो उसी वक़्त उठा हो।

चन्द्रमती सहमती आवाज़ में बोली, "भूत की बात सच है। मुझे भी पायलों की आवाज़ सुनाई दी है। उस ओर की खाट इस ओर आ

लगी है। इसलिए घबड़ाकर उठ बैठी हूँ। देखिये, रसोई घर का पात्र मेरी खाट पर आ गया है।''

मुरारी ने ढाढ़स बंधाकर कहा, ''आप लोग डरियेगा नहीं, मैं भूत की ख़बर लूँगा।'' इसके बाद वह दो दिन तक रात में पायलों की आवाज़ करता ही रहा। इसलिए अपने पति के द्वारा रसोई घर की खिड़की पर दस्तक देने पर भी चन्द्रमती अपने कमरे से बाहर आने में डर गई।

तीसरे दिन रात को मुरारी बाहर ताक में बैठा रहा। चन्द्रमती के पति को पिछवाड़े के रास्ते में जाते देख वह भी उसी रास्ते जानेवाले जैसा अभिनय करते गुनगुनाने लगा, ''क्या वह मेरी बहन के प्रति ऐस द्रोह करेगा? मैंभी देख लूँगा।''

चन्द्रमती का पति बाहर खड़ा रहा। उसने शंका भरी आवाज़ में पूछा, ''अजी, बात क्या है? क्या हुआ है?''

''और क्या होना है जी! इस घर के मालिक मेरे बहनोई साहब हैं, मेरी बहन के कोई संतान नहीं है। इस घर में कोई औरत आकर जम गई है जिसे उसके पति ने त्याग दिया है। अब मेरे बहनोई कहते हैं कि वे उस औरत के साथ शादी करेंगे। वह औरत भी इसके लिए तैयार है।'' यों कहते तेजी के साथ चला गया, फिर दूसरे रास्ते से आकर अपनी ख़ाट पर सो गया। मुरारी की बात पर चन्द्रमती के पति का विश्वास जम गया। क्योंकि वह उधर तीन दिन से खिड़की के पास खाना देने नहीं आई थी।

फिर क्या था, दूसरे दिन सवेरे चन्द्रमती के पति ने प्रवेश करके वर्मा से कहा, ''मैं मूर्खता वश अपनी पत्नी को यहाँ पर छोड़ गया था। अब कृपया उसे मेरे साथ भिजवा दीजिए।''

भूत के भय से कांपनेवाली चन्द्रमती अपने पति के साथ खुशी-खुशी चली गई। उसके जाने पर वाणी और वर्मा यह सोचकर दुखी हो रहे थे कि चन्द्रमती के चले जाने पर उनका घर एक दम सूना-सा लगता है। तब मुरारी ने कहा, ''तुम लोगों को यह सेचकर खुश होना चाहिए कि तुम्हें भूत से पिंड छूट गया है। उल्टे दुखी हो रहे हो?'' इसके बाद मुरारी ने उन्हें सारी सच्ची कहानी सुनाई और उनसे बिदा लेकर चला गया।

25
शान्तिपुर के विद्रोही, जो पड़ोसी अमृतपुर में चले गये थे, वापस आने के लिए समुचित अवसर की ताक में हैं। उनका नेता वसन्त स्वामी जयानन्द तथा उनके आश्रमवासी रहस्यमय राजकुमार आर्य के सम्पर्क में है। जयानन्द भग्नावेषों में छिपे शाही खजाने का स्मरण उन्हें दिलाते हैं। इसमें जो कुछ है वह उसके वैध स्वामी का है और इसका उपयोग जनकल्याण के लिए होना चाहिये।
आर्य
अज्ञात राजकुमार का रहस्य
चित्र : गाँधी अय्या
वसन्त और आर्य पुराने शाही ख़ज़ाने के निकट मिलते हैं। कुछ स्वयंसेवक उनके साथ सम्मिलित हो जाते हैं।
मैंने बीरसिंह और जबर सिंह को यह बातचीत करते सुना है कि वे दिन के समय यहाँ वापस आयेंगे।
आओ, अन्दर चलकर देखते हैं कि वहाँ क्या है।
हमें एक बैलगाड़ी की आवश्यकता पड़ेगी।
मैं अभी जाकर लाता हूँ।
यहाँ एक और पेटी है।
ठीक है, हमें उसकी ज़रूरत पड़ेगी।
जब दो स्वयंसेवक ख़ज़ाने पर पहरा देते हैं, वसन्त और आर्य बाहर आकर बैलगाड़ी का इन्तज़ार करते हैं।
किसी के आने की आहट सुनाई पड़ते ही। वसन्त और आर्य दीवार की ओट लेकर छिप जाते हैं।
जबर के भेजे सिपाही परेशान नजर आते हैं।
यहाँ किस चीज पर पहरा दें? यह स्थान तो खंडहर है!
थोड़ी देर में हम चले जायेंगे।

सिपाही असावधान थे। उन्हें वसन्त और आर्य ने पीछे से दबोच लिया।

दोनों स्वयंसेवकों ने सिपाहियों को कुछ पत्तियाँ सुंघा दीं। उन्होंने उनके मुँह में कुछ बून्दें भी निचोड़ दीं।

वसन्त रस्सी लाकर सिपाहियों के हाथ पीछे से बाँध देता है।

एक स्वयंसेवक एक गाड़ी हाँक कर ले आता है।

स्वयंसेवक पेटियों को गाड़ी में रखते हैं।

पगड़ियों से ढकी पेटियों के साथ गाड़ी तेजी से बढ़ती जाती है।

उषा की लाली छिटकते ही आर्य बसन्त से बिदा लेता है।
भाई! मैं अमृतपुर में अपने साथियों के पास जाता हूँ। लेकिन अब शान्तिपुर तक वापस पहुँचने के लिए आप को नेतृत्व करना है।
अवश्य, बसन्त, तुम हमारे सन्देश का इन्तजार करना।
अगली सुबह जब बीरसिंह और जबर लौट कर आते हैं तो उन्हें भारी झटका लगता है।
जबर, क्या तुम्हारे सिपाही ऐसे ही पहरा देते हैं?
महाराज, मैंने स्वयं उन्हें चुना। लगता है उन्हें नशीली चीज खिला दी गई है।
महाराज, सब कुछ गायब है! किसी कमरे में कुछ नहीं है।
मुझे आश्चर्य है शायद ही वह दौलत, जिसे पिछली रात देखी थी, अब तक मौजूद हो!
जबर, किसी ने पिछली रात हमारी जासूसी की और हमारे यहाँ से जाने के बाद यहाँ पर हमला किया। लेकिन कौन?
सिपाहियों को जगाते हैं। वे शायद कुछ बतायें।
महाराज, ये अभी भी भौंचक हैं।

हम लोगों के यहाँ पहुँचते ही एक भीड़ ने हमें घेर लिया।
तुम्हें शर्म आनी चाहिये! तुम अपने कर्त्तव्यपालन में नाकामयाब रहे।
जबर वापस चलो। यहाँ समय बर्बाद करने से क्या फायदा !
महाराज! एक तीर! एक सन्देश भी है।
इसे मुझे दो।
यह रहा! इस तीर ने हमें थोड़ा खरोंच दिया है।
जबर सिपाहियों से राजकुमार आर्य के विषय में कुछ सुराग जानने के लिए उनसे फिर पूछताछ करता है। द्वारा आदेश राजकुमार आर्य
शाही खजाने की दौलत प्रजा की, उनके कल्याण पर खर्च करने के लिए है, न कि युद्ध छेड़ने के लिए।
यह आखिर राजकुमार आर्य है कौन?
किसने तुम्हारा मुँह बन्द किया था?
क्रमशः

कुतुबमीनार

कुतुबमीनार दिल्ली के दक्षिण में १०-११ मील की दूरी पर है। इसे कुतुबुद्दीन ऐबक ने (गुलाम वंश) १२०० ईसवी में बनवाना शुरू किया। इसकी ऊँचाई २२९ फुट है। इसमें पाँच मंजिलें हैं। और ३७८ सीढ़ियाँ हैं। इसके निचले भाग की परिधि ४७ फुट है।

यह लाल पत्थर व संगमरमर से बनाया गया है। निचले भाग में २० पंक्तियाँ हैं - एक गोल तो दूसरी कोणाकार। दूसरी मंजिल की सब गोल हैं। तीसरी मंजिल की पंक्तियाँ सब कोणाकार में हैं। ऊपरली पाँच मंजिलें सपाट हैं। कहते हैं इनको फिरोज़शाह ने बनवाया था।

हर मंजिल के चारों ओर बालकनी है। सुना जाता है, कुतुबमीनार के ऊपर किरीट-सा कुछ था। सन् १८०३ में भूकम्प आया और भूकम्प के कारण यह नीचे गिर गया।

कुतुबमीनार के पास ही चौथी शताब्दी का एक लौह स्तम्भ है। इसकी परिधि १६ अंगुल है। ऊँचाई २३ फुट और आठ अंगुल है। इस पर चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की प्रंशसा है।
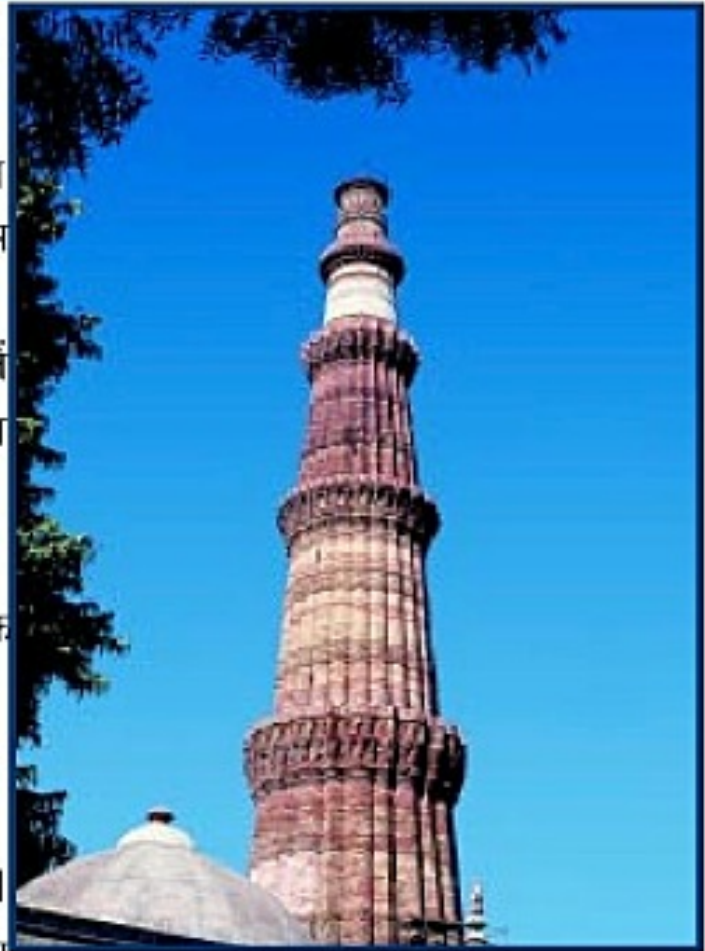
आप के पन्ने आप के पन्ने

तुम्हारे लिए विज्ञान

क्लोनिंग पर एक गहरी नज़र

क्या डॉली नाम परिचित -सा लगता है? बेशक, जिस डॉली के बारे में हमलोग बात कर रहे हैं, वह एक भेड़ी है। वह अपने अधिकार से एक ख्याति प्राप्त व्यक्तित्व है। वह विश्व की प्रथम क्लोनिंग द्वारा उत्पन्न पशु है। अपनी माँ की कार्बन कॉपी होने के कारण वह लगभग उसकी हुबहू एक जैसी ट्विन लगती है, यद्यपि दोनों के बीच छः वर्ष का अन्तर है। इसके अतिरिक्त, उसका कोई पिता नहीं है।

हमारा शरीर कोषाणुओं से बना हुआ है। जिनमें डी.एन.ए. के रूप में अपना काम करने के लिए सूचना भरी हुई है। इसे जेनेटिक कोड कहते हैं। प्रत्येक जीव इसी सूचना का अर्धांश अपने पिता से और शेष अर्धांश अपनी माता से लेता है। क्लोनिंग की प्रक्रिया में बैज्ञानिक पशु के कोषाणु से डी.एन. ए. निकाल कर किसी अन्य पशु से निकाले गये अण्डे के कोषाणु में रख देते हैं। इसे रखने के पहले, जिसके कोषाणु में रखा जाता है, उसका डी.एन.ए. निकाल दिया जाता है। ठीक इसी प्रक्रिया से डॉली का जन्म हुआ।

तुम्हारा प्रतिवेश

गहरे समुद्र के प्राणी

अनोखा किन्तु सच! व्हेल्स, सील्स तथा डॉल्फिन्स जैसे नीले रंग के जल में रहनेवाले प्राणी सागर के नीले रंग को नहीं देख सकते।

अश्मीभूत अवशेष के बैज्ञानिकों की राय के अनुसार पूर्वकालीन व्हेल्स, डॉल्फिन्स और सील्स समुद्र तटीय जल में रहते थे जहाँ पत्थर, कीचड़ तथा रेत मिश्रित मलबों से नीला रंग दिखाई नहीं पड़ता था। इसलिए उनकी आँखों को बिना नीला देखे पदार्थों को देखने का अभ्यास हो गया। मनुष्यों तथा अन्य नर-बानरों की आँखों में लाल रंग पहचानने के लिए तीसरा कोन होता है। कोन – कोषाणु किसी पदार्थ के सूक्ष्म बिस्तार को देखने के लिए, जैसे रंग, हमारी मदद करते हैं, जबकि अन्य कोषाणु,जिन्हें लाल कोषाणु कहते हैं, सामान्य क्षेत्र पर प्रकाश के उत्तेजन का प्रत्युतर देते हैं, पर बिस्तार में अन्तर बताने में वे सक्षम नहीं होते।

यद्यपि बे नीला नहीं देख सकते, फिर भी डॉल्फिन्स की दृष्टि मनुष्यों से कहीं अच्छी होती है। बे गन्दे पानी में भी स्पष्ट रूप से देख सकते हैं।

आप के पन्ने आप के पन्ने

क्या तुम जानते थे?

माँ–मुर्गी का रहस्य

तुम क्या समझते हो कि अण्डे के ऊपर बैठने की यदि कोशिश करो तो क्या होगा? स्वभावतः उसका खोल टूट जायेगा। तब तुम ऐसा क्यों सोचते हो कि माँ-मुर्गी के उस पर बैठने से अण्डा नहीं टूटेगा। अस्तु, रहस्य अण्डे के आकार में है। अण्डा प्रकृति का पैक करने का एक अनोखा तरीका है।

तुमने देखा होगा कि बाजार में अण्डे कैसे बेचे जाते हैं। उनके संकीर्ण किनारों को ऊपर की ओर रखा जाता है। मुर्गियाँ भी सेने के लिए उसी प्रकार बैठती हैं, जब अण्डे का संकीर्ण किनारा ऊपर की ओर रखा जाता है। किसी पदार्थ को नष्ट भ्रष्ट करने के लिए उसका आकार उतना ही महत्वपूर्ण होता है जितना कि उन उपादानों का जिनसे वह बना होता है। यद्यपि अण्डे का खोल सचमुच बहुत भुरभुरा होता है, इसका अनोखा आकार इसे आसानी से टूटने नहीं देता।

अपने भारत को जानो

विज्ञान के बढ़ते कदम

१. भारत के प्रथम रॉकेट का नाम क्या है? इसे किस स्थान से ऊपर प्रक्षेपित किया गया?

२. उस संस्था का नाम बताओ जिसने भारत का प्रथम कम्प्यूटर विकसित किया।

३. किस भारतीय वैज्ञानिक ने गणित पर अपनी कृति का नाम अपनी बेटी के ऊपर रखा?

४. महावीराचार्य कौन थे? उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति क्या है?

(उत्तर पृष्ठ ७० पर)

चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?

SOURAA

NARAYANAMURTHY TATA

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा, प्लाट नं. ८२ (पु.न.९२),
डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई -६०००९७.

जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

बधाइयाँ

विजयी प्रविष्टि

रानाकान्ता दास,
C/o.त्रिलोचन दास,
ग्रा./पोस्ट-कोमना,
जि.-नुआपाड़ा,
(उड़ीसा).
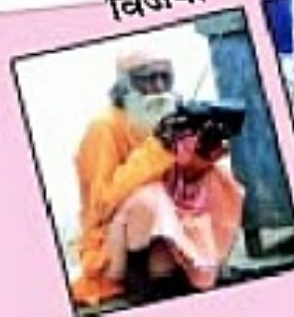
वाह! दोनों का मज़ा, संगीत और ख़बर।
इनकी टिकी है, बाज़ार-भाव पर नज़र॥

'अपने भारत को जानो' प्रश्नोत्तरी के उत्तर:

१. रोहिणी-७५; थुम्बा से नवम्बर १९६७ में।
२. भाभा आण्विक अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई।
३. भास्कर की ''लीलावती'' अपनी बेटी के नाम पर।
४. एक नौवीं शताब्दी का जैन गणितज्ञ, ''गणित सार संग्रह''।

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 26 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor: B. Viswanatha Reddi (Viswam)

कितना अपव्यय!

एक दिन बीना अपनी माँ के साथ अपने पिता के कार्यालय के निकट बाज़ार में ख़रीददारी के लिए जाती है। लौटते समय वह अपने पिता को आश्चर्य देना चाहती है। उनकी ऑफिस में जाने पर पता चलता है कि वे एक मीटिंग में बैठे हैं जो जल्दी ही ख़त्म होनेवाली है। इसलिए बीना और उसकी माँ को उसके पिता के कैबिन में बैठकर प्रतीक्षा करने के लिए कहा जाता है।

बीना अन्दर जाते ही चकित रह जाती है। उसके पिता ऑफिस में नहीं थे, फिर भी ए.सी. चल रहा था। ट्यूब लाइट तथा पिता की मेज़ पर का टेबुल लैम्प भी जल रहे थे। छत के पंखे के साथ-साथ एक कोने में रखा पेडस्टल फैन भी शान से घूम रहा था।

बीना के पिता अपनी ऑफिस के अन्दर प्रवेश करते हैं और उन्हें देखकर प्रसन्नतापूर्वक आश्चर्य प्रकट करते हैं। बीना कहती है, ''डैडी, घर पर आप मुझे तो कहते हैं कि बत्तियों, पंखों तथा अन्य सभी विद्युत उपकरणों के स्विचों को जब प्रयोग में न हों तो ऑफ रखा करो। लेकिन आप अपनी ऑफिस में भी वैसा ही क्यों नहीं करते? आपने ए.सी. बत्तियों, पंखों को बाहर जाते समय ऑफ नहीं किया। डैडी, जब बिल की अदायगी कोई और करे, तब क्या बिजली बर्बाद करना उचित है?''

बीना का सवाल उसके पिता के गाल पर तमाचे की तरह चोट करता है। 'मेरी छोटी बिटिया कितनी बुद्धिमती है', वे सोचते हैं। 'उसने कुछ ऐसी चीज़ देखने के लिए मेरी आँखें खोल दी हैं जिसे मैं अब तक नहीं देख सका था।'

''धन्यवाद तुम्हें, मेरी प्यारी बच्ची!'' वे बीना को कहते हैं। ''अब से हर चीज़ का स्विच, जो इस्तेमाल में नहीं है, सिर्फ घर पर ही नहीं, ऑफिस में भी, ऑफ करना नहीं भूलूँगा। मैं जानता हूँ बिजली का अपव्यय अपराध है, चाहे वह कहीं भी हो!''

CHANDAMAMA (HINDI) JULY 2005
REGD NO. TN/PMG(CCR)-594/03-05
REGD. WITH REGISTRAR OF NEWSPAPER FOR INDIA NO.1087/57
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT NO.381/03-05 FOREIGN - WPP NO.382/03-05